श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला—३

● संयोजक-सम्पादक

डॉ० नरेन्द्र भानावत

● लेखक

ओंकार पारीक

● प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ,
समता भवन, रामपुरिया मार्ग,
बीकानेर (राजस्थान)

● **प्रथम संस्करण १९७६ (११०० प्रतियां)**

प्रकाशकीय निवेदन

यह वडा सुखद सयोग है कि भगवान् महावीर के २५वें निर्वाण शताब्दी समारोह के समापन के साथ ही उन्ही के धर्मशासन के इस युग के महान् क्रातिकारी युग-पुरुष श्रीमद् जवाहराचार्य का जन्म शताब्दी-समारोह मनाने का हमे सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा. का जन्म स १९३२ मे कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को थादला (म प्र) मे हुआ था। १६ वर्ष की अवस्था मे आपने जैन भागवती दीक्षा अगीकृत की और स १९७७ मे आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। स २००० मे आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को भीनासर (बीकानेर) मे आपका स्वर्गवास हुआ।

आचार्य श्री का व्यक्तित्व वडा आकर्षक और प्रभावशाली था। आपकी दृष्टि वडी उदार तथा विचार विश्वमैत्रीभाव व राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत थे। आपने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-आन्दोलन के सत्याग्रह, अहिसक प्रतिरोध, खादीधारण, गोपालन, अछूतोद्धार, व्यसनमुक्ति जैसे रचनात्मक कार्यक्रमो मे सहयोग देने की जनमानस को प्रेरणा दी और दहेजप्रथा, वालविवाह, वृद्धविवाह, मृत्युभोज, सूदखोरी जैसी कुप्रथाओ के खिलाफ

लोकमानस को जागृत किया। आपके राष्ट्रधर्मी क्रान्तद्रष्टा व्यक्तित्व से प्रभावित होकर राष्ट्रपिता महात्मा गाधी, लोकमान्य तिलक, प. मदनमोहन मालवीय, सरदार पटेल आदि राष्ट्रनेता आपके सम्पर्क मे आये।

आप प्रखर वक्ता और असाधारण वाग्मी महापुरुष थे। 'जवाहर किरणावली' नाम से कई भागो मे प्रकाशित आपका प्रेरणादायी विशाल साहित्य राष्ट्र की अमूल्य निधि है। वह ओज, शक्ति और सस्कार-निर्माण का जीवन्त साहित्य है। इस साहित्य से प्रेरणा पाकर हजारो लोगो ने अपने जीवन का उत्थान किया है। ऐसे महान् ज्योतिर्धर आचार्य का साहित्य केवल जैन समाज की ही सम्पत्ति नही है, उसे विश्व-मानव तक पहुँचाना हमारा पुनीत कर्तव्य है।

इसी भावना से प्रेरित होकर जन्म-शताब्दी-वर्ष मे हमने आचार्य श्री की प्रेरणादायी जीवनी तथा धर्म, समाज, राष्ट्रीयता, शिक्षा, नारी-जागरण जैसे महत्त्वपूर्ण विषयो पर प्रकट किये गये, उनके विचारो को सुगम पुस्तकमाला के रूप मे जन-जन तक पहुचाने का निर्णय लिया है।। प्रस्तुत पुस्तक उसी योजना का एक अग है। इसी योजना के अन्तर्गत अन्य भाषाओ मे भी कतिपय पुस्तको का प्रकाशन विचाराधीन है।

इस प्रकाशन-योजना को मूर्तरूप देने हेतु अखिल भारतीय स्तर पर सघ के अधीन गत वर्ष "श्री जवाहर साहित्य

प्रकाशन निधि" स्थापित करने का निर्णय किया गया था। निर्णय के क्रियान्वयन मे श्रीयुत् जुगराज जी सा धोका, मद्रास की प्रेरणा एव सक्रिय सहयोग विशेष उल्लेखनीय एव उपयोगी रहे। सघ इसके लिए उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता है।

इस योजना की क्रियान्विति मे योजना के सयोजक-सपादक डॉ० नरेन्द्र भानावत व अन्य विद्वान् लेखको का जो आत्मीयतापूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है, उसके लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं।

आशा है, यह सुगम पुस्तकमाला पाठको के चरित्र-निर्माण एव वैचारिक उन्नयन मे विशेष प्रेरक सिद्ध होगी।

गुमानमल चोरड़िया
अध्यक्ष

भवरलाल कोठारी
मन्त्री

श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

संयोजकीय वक्तव्य

भारतीय धर्म और दर्शन के इतिहास का यह एक रोचक तथ्य है कि जैन-परम्परा अविच्छिन्न रूप मे अद्यावधि चली आ रही है। इसी गौरवमयी परम्परा मे आज से १०० वर्ष पूर्व सयम, साधना एव ज्ञानज्योति को प्रज्वलित करने वाले युग-प्रवर्तक क्रान्तदर्शी आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा का जन्म हुआ। आपने धर्म को आत्मा का प्रकृत स्वभाव माना और आत्मकल्याण के साथ-साथ लोक-कल्याण व स्वस्थ समाज रचना का बुनियादी आधार मानते हुए युगीन सन्दर्भों मे उसे व्याख्यायित किया इससे धर्म का तजस्वी रूप प्रकट हुआ और समाज तथा राष्ट्र को समानता तथा स्वतन्त्रता के पुनीत पथ पर निरन्तर आगे बढते रहने की प्रेरणा मिली।

यह बडी प्रसन्नता की बात है कि ऐसे महान् प्रतापी ज्योतिर्धर आचार्य का 'जन्म-शताब्दी महोत्सव' अखिल भार-तीय स्तर पर तप, त्यागपूवक मनाया जा रहा है और इस उपलक्ष्य मे श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन सघ ने आचार्य श्री के जीवन-प्रसगो और उपदेशो से सर्वसाधारण को परिचित कराने के लिए 'श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला' योजना के अन्तर्गत कतिपय पुस्तकें प्रकाशित करने का निश्चय किया

है। इसी योजना के अन्तर्गत यह पुस्तक पाठको के कर-कमलो मे सौपते हुए हमे आनन्द की अनुभूति हो रही है।

इस पुस्तक के लेखक श्री ओकार पारीक राजस्थान के लोकधर्मी प्रगतिशील चेतना के कवि, जागरूक पत्रकार और प्रखर चिन्तक हैं। उनकी भाषा मे लोकगध और ताजापन तथा शैली मे ओजस्विता-तेजस्विता है। हमारे निवेदन पर उन्होने यह पुस्तक लिखना स्वीकार किया, जो स्वय में श्रीमद् जवाहराचार्य के प्रति उनकी श्रद्धा का प्रतीक है। अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी श्री पारीक ने आचार्य श्री के समग्र साहित्य का आलोडन-विलोडन कर समाज क्रातिदर्शन के रूप मे यह लोकभोग्यनवनीत प्रस्तुत किया है। आशा है, इसके आस्वाद-आचरण से समाज को स्निग्ध-पुष्ट स्वस्थता और नई ताजगी प्राप्त हो सकेगी। इसी विश्वास के साथ—

नरेन्द्र भानावत
सयोजक—सम्पादक
श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला

१८ सितम्बर, ७६
जयपुर (राज.)

लेखकीय

आत्म-लय

श्रीमद् जवाहराचार्य, भारत की आध्यात्मिक-क्रांति और सामाजिक सचेतना के सगम-रूप युग प्रधान पण्डित और महान् अनुशास्ता आचार्य थे। उनको जन्म देकर जीवन स्वय धन्य हो चुका। यह अत्युक्ति नहीं बल्कि एक युग परीक्षित सत्य है। काल साक्षी है कि आचार्य प्रवर ने अपने जीवन काल मे लाखो प्राणियो के जीवन की रक्षा हेतु समाज को सोते से जगाया, जीव-दया का जो व्यावहारिक और मानवीय आन्दोलन आचार्य श्री ने प्रवर्तित किया, वह आज भी बेमिसाल है।

जीवन वही धन्य होता है जिसे पाकर विश्व-जीवन अनन्य हो उठता है। सत ऐसे ही होते हैं। महापुरुषो का जीवन विश्वकामी होता है। आचार्य प्रवर श्री जवाहर का जीवन एक बहती हुई वेगवती नदी सा है। कही ठहराव नही, कही रुकाव नही, लुकाव-छुपाव नही।

उन्होने जो कुछ समाज मे देखा, उसे शब्द देने मे कभी सकोच नही किया। बडे निडर वक्ता, प्रखर सूझ-बूझ के

धनी, शास्त्रो के निष्णात पण्डित, कुशाग्र तार्किक और बाल सुलभ सारल्य की प्रतिमूर्ति थे आचार्य श्री जवाहर।

आचार्य श्री ने जीवन भर भारतीय समाज का मानस झकझोरा। वे उच्च कोटि के राष्ट्रधर्मी थे। स्वदेशी आन्दोलन का उन्होने अपने प्रवचनो मे, गोराग सत्ता से बेखौफ रहकर, केवल मौखिक समर्थन ही नही किया बल्कि आपने अपने शिष्यो व भक्तो को खादी पहनने के प्रति प्रेरित किया व आजादी के लिए सर्वस्व अर्पण करने की अभिप्रेरणा समाज को दी।

आचार्य श्री के प्रति भारतीय समाज सदा आभारी रहेगा, कारण वे वस्तुत धर्म के मर्म को भारतीय आत्मा की गहराई तक ले जाने मे सफल हुए। आचार्य श्री—अध-विश्वास, रूढि-परम्परा तथा जड़ता मूलक सामाजिक प्रथाओ, प्रणालियो, व्यवहारो, रीतिरिवाजो व विचारधाराओ का प्रबल विरोध किया करते थे।

यदि कहू कि श्रीमद् जवाहराचार्य के जीवन मे समाज-क्राति प्रणेता महर्षि दयानन्द तथा आध्यात्मिक जागरण के विश्वनेता स्वामी विवेकानन्द—दोनो युग विभूतियो का युगान्तर-कारी एकीकरण, समन्वयीकरण, जवाहरीकरण हुआ है, तो इसे अत्युक्ति नही कहा जाएगा।

जीवन-साहित्य सृजेता :

विक्रम सम्वत् १९४९ से १९९९—अर्द्ध शताब्दि

पर्यन्त भारत मे एक साधु-पुरुष मारवाड से महाराष्ट्र और देहली मे लेकर बम्बई तक ५१ चातुर्मासो का धर्म-चक्र प्रवर्तित करता हुआ चलता रहा सदा चलता रहा....... पगपग पर प्रेरणास्पद प्रवचन .. पगपग पर समाज सचेतना का—लोकोपकारी प्रतिबोध-प्रयोग ! आचार्य श्री जवाहर ने जो कुछ कहा—वह श्रमण सस्कृति का युग-अभिवचन सिद्ध हुआ। किसान बीज बोता है और साधु अक्षर ! अक्षर उगते हैं, साहित्य सरजना होती है। बीज उगता है आदमी जीवन धारता है। साधु आगे बढता है। वह जीवन को गतिशील करता है—अपने युग-साहित्य को प्रगतिशील ! हर युग की अपनी गति होती है, प्रगति होती है और उसकी जैविक गत्यात्मकता भी अनुपम होती है, ऊर्जस्विता।

मैंने आचार्य प्रवर का साहित्यानुशीलन कर एक तत्त्व पाया—वह तत्त्व है—जीवन की जैविक शक्ति का ! हाँ, जीवन का भी जीवन होता है। उसकी जिजीविषा के सरक्षक—पालक—पोषक होते हैं सत और कलाकार ! आचार्य प्रवर जीवन साहित्य सृजेता थे। जीव हिंसा से दुखित होकर उनका मन, प्राण जब घासुओ मे घुल-घुल जाता था अपने जमाने मे, तब काल के पाव भारी पडते थे। विधवाओ की वेदना, बाल विवाह की कचोट, धार्मिक आडम्बरो की दुखमय स्थिति, विदेशी सस्कृति की मोहाधता, फैशनपरस्ती तथा नारी जाति

के प्रति दुर्भावमूलक वातावरण और स्वतन्त्रता के प्रति उदासीनता आदि नाना प्रकार के सामाजिक प्रश्नो—प्रसगो व सदर्भों से उनकी वाणी सदा करुणा और आक्रोश से आप्लावित रहती थी ।

आचार्य श्री जीवन साहित्य सृजेता थे । उनके जीवन और साहित्य की उपमा हम बीकानेरी मिश्री से दे सकते हैं । देखने मे स्फटिक और नितान्त स्वच्छ और सुन्दर, खाने मे मधुरातिमधुर । दुर्योगात् कही कोई मिश्री की सख्त डली माथे आ पडे तो........चोट भी असरदार ही मानिएगा । आचार्य प्रवर का साहित्य इसीलिए नाना रूप, रस, रग का अनेकातवाद लिए हुए है । उनके मोरवी, अहमदनगर, बीकानेर, जामनगर, उदयपुर राजकोट, रतलाम, जावरा, इन्दौर तथा घाटकोपर के प्रवचन-साहित्य को एक साथ यदि हम अध्ययन कर देखें तो हमे आचार्यश्री का सात्विक समाज-दर्शन सम्यक् रूपेण समझ मे आता है ।

आचार्य श्री का समाज-दर्शन :

आचार्य प्रवर के सपनो का आदर्श-समाज भारत मे स्थापित होकर रहेगा । उन्होने अपने जीवनकाल मे समतावादी समाजवाद की जो युगपरिकल्पना की थी, उसे आज हम यदि आर्थिक स्वराज्य व स्वावलम्बन की वर्तमान लोक मुहीम से जोडकर देखें तो हमे लगेगा कि आचार्य श्रीमद् जवाहर भारतीय माजवाद के अग्रेसर लोक-पुरुष है ।

ग्रापने ग्रपने रूढिचुस्त समाज की परवाह न कर उदयपुर चातुर्मास काल मे सम्वत् १९९० मे फरमाया—

"मेहतरानी गटर साफ करती है ग्रौर नगर की जनता को रोगो से बचाती है। वह नगर की जनता के प्राणो की रक्षिका है। उसकी सेवा ग्रत्यन्त उपयोगी ग्रौर ग्रनुपम है। फिर भी चवरवाली को वडी समझना ग्रौर मुकाविले मे महतरानी को नीच मानना भूल है, ग्रज्ञान है, कृतज्ञता के विरुद्ध है।"

इस युगातरकारी कथन को प्रस्तुत कर मैं चाहूगा कि विज्ञ पाठक भारतीय समाज मे व्याप्त ऊँच-नीच की मन-भेद भरी धारणाग्रो के परिप्रेक्ष्य मे लोकमान्य तिलक, गोखले, गांधी, नेहरू, ठक्कर वापा, विनोवा ग्रौर लोकनेत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के युग-प्रवोध को ग्राचार्य प्रवर की मार्मिक सवेदना से जोडकर देखें तो उस समाजवाद की तस्वीर नजर ग्राएगी जिसकी स्थापना की ग्रोर पूरा भारत प्राण-प्रण से लगा है।

ग्राचार्य श्री कहा करते थे—धनपतियो से—कि ग्रपनी सम्पत्ति के ट्रस्टी वनो। ट्रस्टीशिप का सिद्धात गांधीजी ने प्रचलित किया। इस वात से यह सिद्ध होता है कि वे पू जीवादी एकाधिकारवाद के कभी पक्ष मे नही रहे।

अब ऐय्याशी के दिन नहीं रहे :

आज पुन सारा राष्ट्र स्वदेशी की ओर आस्थावान होता जा रहा है। असली जमीन की आवाज तो यही है कि स्वदेशी अपनाओ। जिस देश मे ४२ करोड लोग भूख के कगार पर खडे हो वहाँ ऐय्याशी की कल्पना मात्र का मतलब विराट जन-समुदाय की अवमानना है। आचार्य श्री युगद्रष्टा थे। उन्होने इस सदर्भ मे कहा है—

"अब ऐय्याशी के दिन नही रहे। मौज मजे उडाने के दिन लद गए। इसलिए सादगी धारण करो। विलासिता को तिलाजलि दो।"

लगता है आज की ध्वनि कल मे और कल की ध्वनि आज मे सदा रूपान्तरित होती आई है। आचार्य और सत—युग-काल ध्वनियो के रूपातरकार होते है और व्याख्याकार भी।

आचार्य श्री के समाज-दर्शन का ध्रुव सत्य आम आदमी की वेदना से जुडा है। लोक ही लोक की कसौटी है। लोक-सघ को आचार्यों ने सदा उच्च और पवित्र माना है।

संघ-एकता की ओर :

महापुरुषो का जीवन लोक-जीवन की एकता का नियमन करता है। आचार्य प्रवर ने सन् १९३१ के दिल्ली मे आयोजित साधु सम्मेलन के अवसर पर यह महसूस किया कि निर्ग्रन्थ वर्ग

की स्थिति कुछ विषम हो रही है। साधु-साध्वी-समाज मे व्याप्त निरकुशता पर नियन्त्रण रखना उस समय जरूरी था। पूज्य श्री ने गम्भीर आत्म चिन्तन कर यह निश्चय किया कि साधु-समाज के हाथ मे सामाजिक सुधार का कार्य रहने से चारित्र मे न्यूनता आ जाएगी अत उन्होंने इस कार्य का दायित्व श्रावको के तृतीय वर्ग (ब्रह्मचारी वर्ग) पर डालना उचित समझा और इसकी क्रातिकारी योजना समाज को प्रस्तुत की जो आज 'वीर सघ योजना' के रूप मे युगीन मान-मूल्यो सहित प्रवर्तित है। साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका इन चारों वर्गों के पाये पर सघ टिका है। पूज्य श्री की सघ-एकता का यह चिरन्तन प्रयास, नि.सन्देह एक समाज-धार्मिक क्राति का ही एक युगोन्मेष था। इसका महत्त्व जब तक सघ है तब तक अमिट रहेगा।

पूज्य श्री ने साधु-श्रावक समाज की लोक-मर्यादाओ पर कड़ा आचार्यानुशासन रखा व समय-समय पर न केवल उन्हे सचेत किया बल्कि सवेदित भी।

न केवल जैन एकता के ही वे हामी थे बल्कि उनका क्रांतिकारी जीवन उन अनेक घटनाओ से ओतप्रोत है जहा जैनेतर समाज के विग्रह उन्होंने शात कराए। हजारो की सख्या मे; बड़े-बड़े दीवानों, राजपुरुषो, श्रीमन्तो तथा ग्राम आदिवासी, पिछड़े वर्ग के कर्मकार, दलित हरिजन, मछुहारे,

कसाई और कलाल जातियो के लोगो ने मांस, मदिरा, जुआ, कन्या विक्रय, दहेज तथा जीव हिंसा जन्य कुप्रवृतियो को सदा-सदा के लिए तिलाजलि देकर अपना जीवनोद्धार किया। महापुरुषो का जीवन लोक-सघी होता है। वे लोकधर्मी होते हैं।

पूज्य श्री के जीवन को बहुआयामी रूप मे हम पाते है। आचार्य-पदीय धार्मिक मर्यादा मे रहते हुए भी वे अपने युग-समाज के सदा हमदर्द रहे। महात्मा गाधी का स्वदेशी आदोलन, लोकमान्य तिलक का भारत-ज्ञान, सेनापति बापट का लोक त्याग, सेठ जमनालालजी बजाज की धार्मिक सहिष्णुता, सरदार पटेल की दृढ निश्चियात्मकता तथा ठक्कर बापा की सेवा परायणता—सबका सार तत्त्व हम यदि किसी एक पुरुष चरित्र मे देखना चाहे तो आचार्य श्री की प्रज्ञा व प्रतिभा को हम अप्रतिम लोक-सगम के रूप मे पाते हैं।

असख्यो वनवासियो के बीच जैसे सिंह अकेला ही विचरता है, वैसे ही भक्त-समुदाय के मध्य साधु। निस्पृही, नि सगी, निर्ग्रन्थी, निर्मानमोही होता है आचार्य।

सात्विक धार्मिकता की ओर

वैज्ञानिक रेडियोधर्मिता की बात करते है और साधु-आचार्य नैतिक धार्मिकता की। समाज का जीवन लोक रूपी प्रयोगशाला से अपना सत्य-तथ्य ग्रहण करता है। मानव

जीवन सुखी है तो विज्ञान सुखी है, साहित्य समृद्ध और संस्कृति सम्पन्न है। मानव को कुंठित कर सभ्यता फलफूल नही सकती।

आचार्य श्रीमद् जवाहराचार्य के साहित्य का सन्देश है, एक कथन में—

"लोग अपनी-अपनी जातियो के सुधार के लिए क़ानून बनाते हैं, जातीय सभाओ मे प्रस्ताव पास करते हैं, लेकिन हृदय मे जब तक हराम आराम से बैठा है तब तक उनसे क्या होना जाना है............लोगो के दिल से हराम नही गया है। उसके निकले बिना व्यक्तियो का सुधार नही हो सकता, और व्यक्तियो के सुधार के अभाव मे समाज सुधार का अर्थ ही क्या है ?"

याद होगा पाठकों को पडित नेहरू का कथन—'आराम हराम है।' यह सही है कि आज भी हराम हमारे दिल से निकला नही है। यह निकले तो समाजवाद आये।

थोड़े में, आचार्य श्री का यही मूल समाज दर्शन है।

'श्रीमद् जवाहराचार्य समाज' कृति की अतरात्मा मे—पूज्य आचार्य श्री जवाहर की युगवाणी का सारसत्त्व और लोक-मूल्य-मथन कहा तक मेरी लेखनी से हुआ है—इसके परीक्षक हैं पाठक और साधक।

आचार्य श्री के प्रवचन साहित्य के परिदृश्य मे कल

और आज की युगध्वनियो की समवेत—एकरसता ने मेरे अन्त करण को गहरे से प्रभावित किया है।

मैं अपने सरलमना विद्वान मित्र डॉ० नरेन्द्र भानावत का हृदय से आभारी हू कि जिन्होने मुझे आचार्य प्रवर श्री जवाहरलालजी म० सा० पर यह कृति प्रस्तुत करने का शुभ अवसर प्रदान किया।

सहज रूप से मैं कृतज्ञ हू भाई भवर कोठारी के प्रति जिन्होने इस कृति के प्रकाशन की त्वरा प्रदर्शित कर सत्साहित्य के प्रसारण का पथ प्रशस्त किया है।

—ओंकार पारीक

अनुक्रमणिका

परिशिष्ट

श्रीमद् जवाहराचार्य
समाज

१

आचार्य देवो भवः

टॉमस कार्लाइल ने कहा है— "मानव समाज की अधकार पूर्ण यात्रा मे महापुरुष प्रकाश स्तम्भ हैं। वे नक्षत्रो के समान चमकते रहते हैं, बीती हुई घटनाओ के साक्षी हैं, भविष्य मे प्रकट होने वाली बातो के लिए भविष्य सूचक चिह्न है तथा मानव-प्रकृति की मूर्तिमती सभावनाये हैं।"

मानव समाज समुद्रवत् है। वह मर्यादाधनी है। वह अपनी समग्र सामाजिक इयत्ता और लोक-सत्ता सदियो से सार्वभौम अनुशासन के रूप मे बनाए हुए है। समाज की समग्रता, उसकी अतःकरणीय एकाग्रता और एकता का अनुशीलन, नियमन, परिसीमन तथा अभिव्यक्तिकरण का गुरुतर दायित्व समाज के लोकनायक आचार्यों का होता है। आचार्यो की भारतीय परम्परा का उत्स और उत्कर्ष यही रहा है कि उनका ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य समाज के लिए सदा सर्वदा दिशाबोधक सिद्ध हो, लोग भटक भी जाय तो सही समय मे ठिकाने

पर पहुँच जाय। 'स्वान्तः 'सुखाय—आचार्य का, संत का, युग प्रणेता विचारक तथा महात्मा-नेता का-अभिधेय नही है।

सर्व जनहिताय - रक्षाय-कल्याणाय - भारतीय समाज के विभिन्न धर्माचार्यों ने जिस अकल्पनीय कष्ट सहिष्णुता और प्रभविष्णुता का लोकादर्श विश्व के समक्ष रखा है, उसी चरित्रधर्मिता के लिए उन्हें देवरूप मान कर, लोककठ ने उनका अभिवंदन किया है।

संसार का कोई धर्म-आचार्य वैर-विग्रह का समर्थन नही करता। पर समाज-समुद्र का कोई पार नही। इसकी आत्मा प्रशात है मूलत गहराई से परखे तो।

अशान्त है तो समाज का मन और मस्तिष्क। समुद्र में ऊपर-ऊपर लहरों का प्रचण्ड आलोडन, गर्जन तथा पारस्परिक दुर्दान्त सघर्षण होता है। यह प्रकृति-क्रम है। सबसे विशिष्टतम और विचित्रतम प्राणी है मनुष्य। यह डरता है तो चूहे से और नही डरता है तो सागर लाघ जाता है, पर्वत फाद जाता है। विज्ञान उसकी मुट्ठी में है। ज्ञान को उसने— महा-पोथीघरो में वंद कर रखा है। वस यही वह चूका है। ज्ञान मुक्त है। ज्ञानी सर्वतंत्र स्वतंत्र होता है। होता वह भी मनुष्य ही

है। प्रकृति प्रदत्त प्रतिभा का यह धनी, समाज की विभिन्न धार्मिक और कार्मिक इकाइयों को अपनी धार्मिक भावना से स्पंदित करता है। लोक सचेतना का संचरण कर यह समाज का सच्चा मित्र, पथ प्रदर्शक और दार्शनिक सिद्ध होता है।

बात उन दिनों की है........!

भारत ने पराधीनता के घोर कष्ट-काल मे ऐसे ही वरेण्य एव वदनीय महान् पुरुषों के कारण जो असीम आत्मबल प्राप्त किया, उसका ऐतिहासिक मूल्यांकन अभी शेष है। यह इस देश का सौभाग्य है कि सन् १८५७ की असफल जन-क्रान्ति के बाद इस देश मे सामाजिक, सास्कृतिक, आर्थिक, शैक्षणिक, वैज्ञानिक, धार्मिक एव राजनैतिक लोक क्षेत्र मे महात्यागी देशनायकों, धर्माचार्यों एव लोकसेवको की एक ऐसी अवतरण-परम्परा प्रवाहित हुई कि सारा ससार भारतीय जनता की अदमनीय आत्मचेतना, मुक्तिकामना एवं विश्व बंधुत्वकारी भावना के आगे नतमस्तक हो गया। लोकमान्य तिलक, गोखले, सेनापति बापट, महात्मा गांधी, कवीन्द्र रवीन्द्र, लाला लाजपतराय, देशबन्धु चित्तरंजनदास, पटेल-बन्धु, प० मोतीलाल एवं जवाहरलाल नेहरू, विनोबा, महादेव देसाई, गणेशशंकर

विद्यार्थी प्रभृति लोकपूज्यो और नेताओ की अप्रतिम देशभक्त पंक्ति के ठीक साथ सन् १८७५ मे मालवा प्रदेश मे थादला ग्राम मे जो बालक अवतरित हुआ, वह भी जवाहरलाल था।

यही जवाहरलाल जैन धर्माचार्य परम्परा का मनीषी विद्वान्-महापडित-विनम्र स्वामी और अनमी अहिंसक और जैन धर्म की स्थानकवासी श्रमण सस्कृति का युगान्तरकारी पुरोधा-धर्मानुशासक-समाज प्रति-बोधक व भारतीय जनता के—आध्यात्मिक स्वराज्य का युगप्रवर्तक क्रान्तद्रष्टा आचार्य अजर-अमर है। इस विभूतिनिधान आचार्य का भारतीय समाज सदा ऋणी रहेगा, कारण एक रूढिचुस्त समाज का अनुशास्ता आचार्य होकर तथा अनेकानेक शास्त्रोक्त नियमोपनियमो, यमो, समिति-गुप्तियो परिषहो का जिस पर अनुकरणीय पालन का गुरुतर दायित्व हो, उसका समूचा जीवन एक खुली पुस्तक है। एक महकता सा लोक-उद्यान है। एक अनवरत प्रवाहित चरित्र-सरिता सा उसका जीवन है। शान्त–शिवम्–अद्वैतम्—सत्य–शिवं-सुन्दरम् का, अनूठी प्रतिभा और लोक प्रतिष्ठा का पायक है।

श्रीमज्जवाहराचार्य का समूचा जोवन, समाज और धर्म की समन्वयवादिता की साधना मे व्यतीत

हुग्रा। ग्राचार्य प्रवर की दवग वाणी, उनकी ग्रलौकिक वाग्मिता ग्रौर पारमिता-प्रज्ञावती मधुमती ग्राचार्य भूमिका ने ग्रपने समसामयिक महापडितो, कुतर्कपथी, पन्नग्राही, छिद्रान्वेपी कथित पोथीकीटो, ज्ञान भार-वाहियो तथा लोकभ्रमाचारियो को ग्रपनी विद्या विनय सम्पन्न विवेकशीलता, तार्किकता तथा ग्रपराजेय शास्त्रीय प्रामाणिकता से न केवल उन्हे दम्भरहित किया वल्कि समाज को ग्रहिसाजन्य युगधर्म विषयक ग्रल्पारभ-महारभ कारी दुखद विवादो से वचाया ग्रौर सही मार्ग दिखाया। समाज ऐसे ग्राचार्यों को देवनाम धन्य मानता है, उनको याद करता है, उनको मरने नही देता। उनको सहज ग्रगीकार करता है। लोक महामहिमावान होता है। उसकी स्मरण व विस्मरण की शक्ति महान् होती है।

भारतीय दर्शनधारा के विचक्षण विद्वान् ग्रौर भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति ग्रौर ग्रभूतपूर्व विचारक डॉ० राधाकृष्णन् ने कहा है—

'भूतल पर मानव-जीवन की कथा मे सवसे वडी घटना उसकी ग्राधिभौतिक सफलताएँ ग्रथवा उसके द्वारा वनाये ग्रौर विगाडे हुए साम्राज्य नही, वल्कि सच्चाई ग्रौर भलाई की खोज के पीछे उनकी ग्रात्मा की,

विद्यार्थी प्रभृति लोकपूज्यो और नेताओ की अप्रतिम देशभक्त पंक्ति के ठीक साथ सन् १८७५ मे मालवा प्रदेश मे थादला ग्राम मे जो बालक अवतरित हुआ, वह भी जवाहरलाल था।

यही जवाहरलाल जैन धर्माचार्य परम्परा का मनीषी विद्वान्-महापडित-विनम्र स्वामी और अनमी अहिंसक और जैन धर्म की स्थानकवासी श्रमरण सस्कृति का युगान्तरकारी पुरोधा-धर्मानुशासक-समाज प्रति-बोधक व भारतीय जनता के—आध्यात्मिक स्वराज्य का युगप्रवर्तक क्रान्तद्रष्टा आचार्य अजर-अमर है। इस विभूतिनिधान आचार्य का भारतीय समाज सदा ऋरणी रहेगा, काररण एक रूढिचुस्त समाज का अनुशास्ता आचार्य होकर तथा अनेकानेक शास्त्रोक्त नियमोपनियमो, यमो, समिति-गुप्तियो परिषहो का जिस पर अनुकररणीय पालन का गुरुतर दायित्व हो, उसका समूचा जीवन एक खुली पुस्तक है। एक महकता सा लोक-उद्यान है। एक अनवरत प्रवाहित चरित्र-सरिता सा उसका जीवन है। शान्त–शिवम्–अद्वैतम्—सत्यं–शिवं-सुन्दरम् का, अनूठी प्रतिभा और लोक प्रतिष्ठा का पायक है।

श्रीमज्जवाहराचार्य का समूचा जोवन, समाज और धर्म की समन्वयवादिता की साधना मे व्यतीत

हुआ। आचार्य प्रवर की दवग वाणी, उनकी अलौकिक आत्मिमता और पारमिता-प्रज्ञावती मधुमती आचार्य भूमिका ने अपने समसामयिक महापडितो, कुतर्कपथी, पल्लवग्राही, छिद्रान्वेषी कथित पोथीकीटो, ज्ञान भार-वाहियो तथा लोकभ्रमाचारियो को अपनी विद्या विनय सम्पन्न विवेकशीलता, तार्किकता तथा अपराजेय शास्त्रीय प्रामाणिकता से न केवल उन्हें दम्भरहित किया वल्कि समाज को अहिंसाजन्य युगधर्म विषयक अल्पारभ-महारभ कारी दुवद विवादो से वचाया और सही मार्ग दिखाया। समाज ऐसे आचार्यो को देवनाम धन्य मानता है, उनको याद करता है, उनको मरने नही देता। उनको सादर अंगीकार करता है। लोक महामहिमावान होता है। उसकी स्मरण व विस्मरण की शक्ति महान् होती है।

भारतीय दर्शनधारा के विचक्षण विद्वान् और भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति और अभूतपूर्व विचारक डॉ० राधाकृष्णन् ने कहा है—

"भूतल पर मानव-जीवन की कथा मे सवसे वडी घटना उसकी आधिभौतिक सफलताएँ अथवा उसके द्वारा वनाये और विगाडे हुए साम्राज्य नही, वल्कि सच्चाई और भलाई की खोज के पीछे उनकी आत्मा की,

की हुई युग-युग की प्रगति है। जो व्यक्ति आत्मा की इस खोज के प्रयत्नो मे भाग लेते हैं, उन्हे मानवीय सभ्यता के इतिहास में स्थायी स्थान प्राप्त हो जाता है। समय शूरवीरों को अन्य अनेक वस्तुओ की भांति बड़ी सुगमता से भुला चुका है, परन्तु संतो की स्मृति कायम है।"

सार तत्त्व यह है कि आत्मान्वेषी विभूतिपादो का लोकोपकार अपरम्पार होता है। विश्व उसका चिर ऋणी रहता है। श्रीमद् जवाहराचार्य ने अपने पूरे जीवन काल मे ५० वर्ष–आधी सदी–भारतीय समाज की आत्मा की चैतन्य शक्ति उजागरित करने मे समर्पित की। १६ वर्ष की किशोरावस्था से ६८ वर्ष की जरावस्था तक देश के कोने-कोने मे घूमकर इस दिव्य भव्य लोक पूज्य ने जनता को अन्ध रूढ़ियों से मुक्त करने, उनको सही धर्म पर चलने तथा आपसी वैर-विग्रह त्यागने, जीव-हिंसा छोडने एवं समाज के दीन दुर्बलों की सेवा-साधना में जीवन लगाने की जो धर्म प्रभावना प्रचारित-प्रसारित और अग्रसित की, उसने भारत भर मे, क्या जैन, क्या अजैन, समस्त लोक समुदाय में एक चेतना का दरिया बहा दिया। क्या समाज इस महागुरु-ऋण से कभी उऋण हो सकेगा?

श्रीमद् जवाहराचार्य को 'जैन धर्म का दयानन्द'

तिलक ने जैन धर्म के बारे मे जो कुछ लिखा, अंग्रेजी पुस्तकों के आधार से। उस जमाने में भारतीय सस्कृति, अध्यात्म, धर्म, ज्ञान तथा आर्षग्रथो का जो अधकचरा अध्ययन अग्रेजों ने अपनी भाषा मे लिखमारा न्यूनाधिक, रूप मे आज भी हम उसको अधिकृत मानने की मानसिक दासता मे पड़े हैं।

लोकमान्य ने अपने युगातरकारी 'गीतारहस्य' मे जैन धर्म को बौद्धधर्म की भाति मात्र निवृत्तिमूलक माना। उन्होने यह भी माना कि जैन धर्मान्तर्गत गृहस्थ मोक्ष भागी नही हो सकता। पूर्ण ज्ञान संसार त्याग के बिना असंभव है। जीवन का एक मात्र लक्ष्य ससारत्याग मुनिवृत्ति मे ही है। इस धर्म मे विधेयात्मकता व आचरणीय बाते बहुत कम अथवा नगण्य हैं।

युग बोध का पुण्य स्वर :

ज्ञाननिधान, आगम-शास्त्र अध्येता, विनयी पंडित प्रवर धर्माचार्य श्री जवाहर ने लोकमान्य तिलक जैसे युगविचारक, पत्रकार, स्वातत्र्य सेनानी तथा 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है, हम इसे लेकर ही रहेगे' के राष्ट्र मंत्रदाता को, जैन धर्म का सार तत्त्व समझाते हुए कहा कि—जैन धर्म की प्रकृति अनासक्ति प्रधान है। अतर साधना के बिना वेष मात्र मुक्ति का

कारण नही है। विषय-वीतरागी गृहस्थ मोक्षभागी होता है। मोक्ष की सहायिका है शुद्ध वृत्ति। भरत चक्रवर्ती ने कोई भेष नही धारा था, उन्हे शीश महल मे खड़े-खड़े केवलज्ञान हो गया था। माता मरुदेवी तथा इलायची पुत्र भी इसके ज्वलन्त प्रतीक हैं। चाहिए क्या-आन्तरिक आत्म भावना का प्रकर्ष। अनासक्ति के अभाव मे निवृत्ति अकर्मण्य है। कामभोगो मे मूर्च्छा, गृद्धि या आसक्ति ससार का कारण है। इसके न होने से मोक्ष होता है। सवर, निर्जरा की साधना से आत्मा नवीन कर्म-बन्धनो से बचती है, बधे कर्मो के पाश से मुक्त होती है। सवर याने अपने को अशुभ कर्मों से बचाना। निर्जरा याने तप–साधना–समाधि पूर्वक पूर्व सचित कर्मों से निवृत्ति। यही है जैन धर्म का तात्त्विक सार।

इतना बोलती है :

लोकमान्य तो लोक मान्य थे। ससार के सभी विद्यावेत्ता-शास्त्रवेत्ता–प्रज्ञा–प्रचेता लोक मे विनीत होना सिद्ध हुए हैं। आचार्य प्रवर की मगलमयी जैनधर्मी सान्ना सुनकर लोकमान्य ने जो कहा, वह युग-युग का विज्ञापन है— "अहिंसाधर्म के लिए सारा ससार भगवान महावीर व बुद्ध का ऋणी है। मैं मुनि श्री का आभार मानता हूँ जिन्होने भारतवर्ष के एक महान धर्म

(जैन धर्म) के विषय मे मेरी गलतफहमी दूर कर उसका शुद्ध स्वरूप समझाया।

पूज्य मुनि श्री जवाहरलाल एक सर्वश्रेष्ठ व सफल साधु हैं। मैं भारत की भलाई के लिए ऐसे सत्पुरुषो से आशीर्वाद चाहता हूँ।"

विनय की विजय :

लोकमान्य तिलक का युग प्रेरक प्रसंग प्रस्तुत करने का लाक्षणिक मूल यही है कि समाज की मान्यता किसी आचार्य के प्रति अंधविश्वास तथा बलात् रूप मे आरोपित नही होती। यद्यपि साधारण संसारी लोग चमत्कार को नमस्कार करते हैं। पर लोकमान्य और युगाचार्य श्री के मध्य जो चर्चानुशीलन हुआ, उसमे 'विनयात् पात्रताम्' — का प्राधान्य द्रष्टव्य है। पाडित्य का प्रदर्शन, अहकार और उद्धत स्वरूप लेकर भी कई धर्मपथी विद्वान्, तपसी तथा शास्त्रज्ञ आचार्य श्री के जीवन काल में उपस्थित हुए, पर उन पर एक विनयवान महान् पर पाडित्यप्रज्ञा प्रवण आचार्य की मार्मिक तार्किकता ने जो विजय प्राप्त की, वह विजय विनय की थी। जैतारण तथा सुजानगढ आदि स्थानो मे हुई— शास्त्रार्थ-चर्चा ने यह सिद्ध किया है कि धीर प्रशान्त विद्वान के धैर्य, औदार्य और निष्कलुष 'आत्मवत्-सर्व

'हे आत्मन् ! गणधर आदेश को भूल कर तू तुच्छ विचार मे क्यो उतर पडा ! आज तो यह दशा है कि हम समाज को प्रेरणा करते है— 'हमारी बात सुनो ।' लेकिन हम क्यो न ऐसा करदे कि जिससे समाज हमसे कहे 'आप हमे अपनी बात सुनाइए ।' इस स्थिति पर नही पहुँचने का कारण आत्म निर्बलता है ।"

युग-स्वामी जवाहराचार्य ने आजीवन इस बात की चेष्टा की कि श्रावकों व साधुओं-आचार्यों के बीच धर्म प्रबोध, शका निवारण, लोकधर्मी वार्तालाप तथा समाज हितकारी सवाद बद न हो। वे अपने प्रवचनो मे हमेशा लोक 'प्रेरक कथा-प्रसगो को प्रस्तुत कर धर्म-प्राण श्रावको को सत्कार्यार्थ अभिप्रेरित किया करते थे । युगाचार्य ने उपर्युक्त कथन मे जो प्रश्न खडा किया है—"समाज हमसे कहे आप हमे अपनी बात सुनाइए ।" क्या हम पूज्यपाद आचार्य श्री की मर्म भावना की तह तक पहुँचे है ! समय परीक्षा ले रहा है........।

सवाल-नकली भगवानों का !

युगाचार्य श्री जवाहर का जमाना हमारी राष्ट्रीय पराधीनता का था । समाज में कुरीतियो का बोलबाला था । धर्माडम्बर का जोर था—देश भर मे । आज हमारे सामने एक सवाल है । सवाल है— उन नकली भगवानो

स्वय साधु का भेष धारण करके सोता को ठग कर ले गया। रावण का नाश धर्म के नाम पर ठगी के कारण ही हुआ।'

['सम्यक्त्व पराक्रम' भाग-१ पृष्ठ ६८]

आज भारत की संस्कृति, धर्म तथा अध्यात्म, वेदान्त तथा स्यादवाद् सरीखी वैज्ञानिक धर्मविधारणाओ को पाश्चात्यविद् सराह रहे हैं। अपना भोग प्रधान जीवन त्याग कर जहां पश्चिम की भीड भागकर भारत में आती है हर वर्ष, वहा हम हैं कि उन लोगो को भारतीय ज्ञान, कर्म और भक्ति का सही मर्म सिखाने जैसे युग प्रभावनामूलक पुण्य कार्य को भी व्यावसायीकरण से नही बचा पा रहे हैं।

वीर अत्याचार नहीं सहता

भारत धर्मनिरपेक्ष गणतंत्र है। धर्मविमुख गणराज्य नही है। हमे सविधान ने धर्म-स्वातन्त्र्य का अधिकार दिया है। यदि धर्म की हानि होती है तो हमे अत्याचारियो का सामना करना चाहिए।

आचार्य प्रवर श्री जवाहर ने बीकानेर चातुर्मास मे, सर मनुभाई मेहता के द्वितीय लदन राउड टेबिल काफ्रेंस मे जाने के अवसर पर प्रतिबोध देते कहा था—

"मै कहता हूँ गुलाम और अत्याचार पीडित जनता

आचार्य प्रवर ने धर्माडम्बर को कभी नही सहा। उनके जीवनकाल मे कई जगह बड़े-बड़े रजवाडो के राजाओ और दीवानो ने उनका स्वागत सरकारी शाही लवाजमे से करने की विनय की पर विनयवंत श्रीमद् जवाहराचार्य ने उनकी यह बात स्वीकार नही की।

आडम्बर—समाज का कलक है। मुनिवर्य श्री जवाहराचार्य जी तो आडम्बरी श्रावकों को भी समय-समय पर खरी-खरी सुना देते थे।

भारत की जनता भगवानो की– आडम्बरी लीला से तंग आ चुकी है। इन रावरणी भगवानों का नाश, युग का तकाजा है।

जैन साधु कायर नही होता। उसके लिए कहा है—

साधयति स्व पर कर्माणि इति साधुः।

पड़ौसी का दुख-दोष :

'ठाणाग' सूत्र वर्णित ग्राम, नगर, राष्ट्र, व्रत, कुल, गरण, संघ, सूत्र, चारित्र और अस्तिकाय— १० धर्मों के प्रबुद्ध व्याख्याता श्रीमद् जवाहराचार्य के युगान्तरकारी साधु-जीवन (बाईस परिषहों, समिति, गुप्ति, आदि निर्ग्रंथ श्रमरण परम्पराओं व मर्यादाओ की पालना सहित) का यदि हम एक लोक व्यक्तित्व के नाते

अध्ययन करे तो हमे यह सूत्र हाथ लगेगा कि कोई भी धर्माचार्य समाज की रूढि-रज्जुओ को तोडने की लोक प्रेरणा जनता को देता है तो वह युग नेता होता है। धार्मिक शब्दावली मे नेता का बहुत प्रचलित रूप तो आज नही है।

इस परिप्रेक्ष्य मे हमे धर्म की मूल युगधारणा को नये परिप्रेक्ष्य मे ग्रहण कर युगानुकूल लोकप्रगतिगामी कदम उठाने चाहिए। याने समाज मे व्याप्त कुरीतियो, अंधविश्वासो, भूतादिक्ष्यो, मिथ्या धारणाओ, प्रवचनाओ तथा विघटनकारी एव विध्वसक शक्तियो के विरुद्ध अहिंसक शौर्य का प्रदर्शन कर ग्राम, नगर, राष्ट्र, प्रशासना, कुल, गण, सघ, जाति, सूत्र तथा दीक्षा स्थविरो-आचार्यो का आशीर्वाद, मार्गदर्शन तथा सहयोग प्राप्त करना चाहिए। त्रस्त, शोषित, दलित और पतित जनता का त्राता धर्म ही हो सकता है। अन्यथा आचार्य प्रवर के शब्दो मे—

> "अगर तुम्हारा पडोसी दुखी है तो इसमे तुम्हारा दोष है।"

इससे श्रावक को दोष से बचना चाहिए। निर्धनता-सामाजिक दोष है। आज इस देश की ४०

प्रस्तावित आचार्य पद का प्रलोभन ठुकरा दिया। इस प्रसंग मे सन् १९३१ मे दिल्ली नगरी में दिए गए स्थानकवासी एकता विषयक भाषण को प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे पाठक यह निष्कर्ष निकाल सकेंगे कि आज के सत्तापेक्षी युग मे क्या ऐसे व्यक्तित्व अब प्राप्य हो सकते है ?

"मेरी स्पष्ट सम्मति यह है कि जब तक समस्त उपसम्प्रदायो के साधु अपने पृथक-पृथक शिष्य बनाना तथा पुस्तक आदि अपने-अपने अधिकार में रखना छोड कर एक ही आचार्य के अधीन नही होगे तथा अपने शिष्य तथा शास्त्र पूर्णरूपेण उन आचार्य को नही सौप देगे, तब तक संघ की कोई मर्यादा स्थिर रहना कठिन है। यह कार्य चाहे आज हो चाहे कल हो या बहुत समय बाद हो, परन्तु जब तक ऐसा न होगा तब तक संघ मे प्रत्यक्ष रूप से दिखने वाली बुराइया दूर नही होगी।

मुझे अपनी ओर से यह बात प्रसिद्ध करने मे भी संकोच नही यदि उक्त रीति से समस्त संघ एक सूत्र में संगठित होता हो तथा शास्त्राज्ञा का पालन होता हो तो इसके लिए सर्वस्व समर्पण करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। हा, साधुता को मैंने अपने जीवन का प्राण समझकर अगीकार कर लिया है, इसलिए उसे अगर

...प्राण लेने का भय बतलाकर भी छुडाना चाहे तो भी मैं इसे नही छोड सकता ।"

समाज पर इन बातो का असर पडता है । कारण साधुजनो, शासको तथा श्रीमन्तो के आचरण का अनुसरण साधारण आदमी करता है । यदि समाज के कर्णधारो वर्ग मे (भले ही वे राजकीय हो या सामाजिक-धार्मिक) कदाचार व्यापता है अथवा आचरण शिथिल होता है तो समाज की चारित्रिकता पर विपरीत प्रभाव पडता है ।

साधु-जीवन-खांडे की धार .

वीतराग महात्माओ के पीछे समाज क्यो दौडता है ? इसलिए कि संसार मे सारी महिमा त्याग की है । त्याग सफल होता है यदि त्यागी का चरित्रबल ऊंचा हो । कोरी चारित्रिकता भी अपूर्ण सिद्ध होती है यदि चरित्रवान होते हुए भी वह प्रतिभासम्पन्न नही है । कोरी साधना भी समाज को जाग्रत व उद्बोधित करने के लिए तब तक और प्रभावी सिद्ध नही होता जब तक कि साधु त्याग के जीवन की धार को तपस्या से तपाता नही है । साधु-जीवन पालना और खाडे की धार पर चलना बराबर है । उसकी चर्या बडी कठिन, कष्टप्रद है-नियमो का निर्दोष पालन एक कठिनतम परीक्षा

परीषहो की सहिष्णुता में अपार मनोबल की अपेक्षा बयालीस दोष टाल कर आहार पानी लेना, समिति-गुप्ति आदि की परिपालना साधु जीवन की कसौटिया है। सच्चरित्र साधुओ और योगियो के आगे जमाना सिर झुकाता है।

समाजसुधार तथा जनता को ज्ञान बोध देकर सचेष्ट करने के लिए श्रीमद् जवाहराचार्य साधु समाज को समय-समय पर उद्‌बोधित करते रहे।

इदं न मम !

समाज का मन, मस्तिष्क और हृदय परिवर्तित करना – करवाना चरित्रवान लोकसेवको और धर्म-नायको के ही बूते की बात है। शास्त्र कहता है— चौदह राजू लोकों के जीवो को अभयदान देना और एक व्यक्ति को सम्यक् ज्ञानाभिमुख करना बराबर है। 'सूत्रधर्म' अध्याय मे श्रीमद् जवाहराचार्य ने इस प्रभावना मूलक शास्त्राज्ञा का सदर्भ दिया है। वह वडा दूरगामी है।

महात्मा गाधी अकेले थे अपने प्रारभिक राष्ट्रसेवी जीवनकाल मे। उन्हे सही ज्ञान हुआ दक्षिण अफ्रीका मे मानव रग–भेद देखकर। एक गाधी के वदलने की जरूरत थी। उसे खादी धारने की जरूरत थी। उसे

चर्खा चलाना था। एक समय आया कि गाधी और भारत पर्याय हो गये।

इसी तरह साधु समाज यदि चरित्रदृढ हो, स्थित प्रज्ञ–ज्ञानभिज्ञ और लोक जागरण हेतु पूज्यपाद कृतज्ञ हो तो समाज का हृदय बदल जाएगा।

श्रीमद् जवाहराचार्य कहते हैं योगियो से कि होम दो स्व को, विलयित कर दो अह को, आत्मा मे अपूर्व आभा का उदय होगा। वे आगे कहते हैं—

'योगियो! अपना किया हुआ स्वाध्याय, प्राप्त किया हुआ विविध भाषाओ का ज्ञान, आचरित तप आदि समस्त अनुष्ठान ईश्वर को अर्पित कर दो। अगर तुमने सभी कुछ ईश्वर को अर्पित कर दिया तो तुम्हारे सिर का बोझ हल्का हो जाएगा। कामनाएँ तुम्हे नही सताएँगी। बुद्धि गभीर होगी। अपना कुछ मत रखो। किसी वस्तु को अपनी बनाई नही कि पाप ने आकर घेरा।'

[बीकानेर के व्याख्यान से]

अधिकारो का यज्ञ कर दो

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन मे भाग लेने के लिए विदेश यात्रा पर जाते समय बीकानेर के दीवान सर मनुभाई मेहता को परिलक्षित कर आचार्य श्री ने कहा–

"ज्ञानी पुरुष छोटे से छोटा और बडे से बडा व्यवहार गंभीर ध्येय से, निष्काम भावना से, वासनाहीन होकर यज्ञ के लिए करता है। शास्त्रकारो ने यज्ञ के लिए काम करने को पाप नही माना है। वास्तविक यज्ञ किसे कहा जाय ? गीता कहती है—

'द्रव्य यज्ञा स्तपो यज्ञा, योग यज्ञा स्तथापरे।
स्वाध्याय ज्ञान यज्ञाश्च, यतयः संशित व्रत· ।।२।४०

द्रव्य यज्ञ, तप यज्ञ, योग यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ आदि अनेकों यज्ञ कहे गये हैं। किसी को द्रव्य यज्ञ करना है तो धन पर से अपनी सत्ता उठाले और कहे इदं न मम।

किसी प्रकार की आकाक्षावाला तप एक प्रकार का सौदा बन जाता है। वह तप नही रहता। तप करके उससे फल की कामना न करे और 'इदं न मम' कहकर उसका यज्ञ करदे तो तप अधिक फलदायक होता है। × × × मैं सर मनुभाई मेहता को सम्मति देता हूँ कि वे प्रधान मत्री के अधिकारो का यज्ञ करदे।

आज राष्ट्र को फिर 'इदं न मम' तप-यज्ञ-घोषक शासनाधिकारियों व लोककर्मियों की जरूरत है। हमारे संविधान में संशोधन कर नागरिक–देश दायित्व बोध का जो अंश जोड़ा गया है वस्तुतः यह 'अधिकार यज्ञ' का ही मंगलमय अनुष्ठान है। आचार्य प्रवर जैसे ऋषिकल्पी

समयज्ञ पुरुषो का स्वप्न भारत का लोक-शासक साकार करेगा, यह अपेक्षा है ।

साधु और समाज सुधार

माह अक्टूबर सन् १९३१ ' दिल्ली मे आयोजित स्थानकवासी साधु सम्मेलन' के शुभ अवसर पर युग-प्रधान श्रीमद् जवाहराचार्य के मस्तिष्क मे एक क्रान्ति-कारी प्रश्न चक्कर काटने लगा— क्या साधु वर्ग को प्रत्यक्षत: समाज सुधारक कार्यों मे, श्रावक जीवन मे हस्तक्षेप करना चाहिए ? प्रश्न युगान्तरकारी महत्त्व का था और आज भी है ।

विश्व-धर्मों के इतिहास पर दृष्टि डाली जाय तो जो रक्तरंजित सघर्ष धर्म के नाम पर राज्य सत्ताओ ने लडे हैं, उनकी पुनरावृत्ति कोई नही चाहेगा । यह धर्म के नाम नर सहार, धर्म का सत्ता के साथ गठजोड होने से हुआ । यही खतरा आचार्य श्री के समक्ष सामाजिक परिप्रेक्ष्य मे उपस्थित था । सम्प्रदाय-सम्प्रदाय की आपसी तनातनी में विभक्त और अशक्त हुए जैन समाज को संघीय एकता मे आबद्ध करने के लिए उन्होने साधुओ व श्रावको के मध्य एक तृतीय स्वाध्यायी तटस्थ 'ब्रह्मचारी वर्ग' की परिकल्पना सम्मेलन मे रखी । आपने फरमाया —

"आज निर्ग्रन्थ वर्ग की स्थिति कुछ विषम सी हो रही है। साधु समाज और साध्वी समाज मे निरकुशता फैलती जाती है। इसका कारण, किस प्रकार के पुरुष और किस प्रकार की महिला को दीक्षा देनी चाहिए, इस बात का पूरी तरह विचार नही किया जाता रहा है। दीक्षा सम्बन्धी नियमो का पालन बहुत कम हो रहा है। इस नियमहीनता का दुष्परिणाम यहा तक हुआ है कि अपनी जैन सम्प्रदाय से भिन्न जैन सम्प्रदाय मे दीक्षा लेने के कारण मुकदमेबाजी तक हो जाती है। साधु समाज के निरकुश होने और साधुता के नियमो मे शिथिलता आ जाने के कारणो मे से एक कारण है—साधुओ के हाथ मे समाज सुधार का काम होना। आज सामाजिक लेख लिखने, वाद विवाद करने और इस प्रकार समाज सुधार करने का भार साधुओ पर डाल दिया गया है। समाज सुधार करने का कार्य दूसरा कोई वर्ग अपने हाथ मे नही ले रहा है। अतएव यह काम भी कई एक साधुओं ने अपने हाथ मे लेना पडा है। इसलिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मे साधुओ द्वारा ऐसे ऐसे काम हो जाते है जो साधुता के लिए शोभास्पद नही कहे जा सकते।

यदि समाज सुधार का काम साधु वर्ग अपने हाथ मे नही लेता तो समाज बिगडता है और जो समाज

लौकिक व्यवहारों मे ही बिगडा हुआ होगा उसमे धर्म की स्थिरता किस प्रकार रह सकेगी ? व्यवहार से गया गुजरा समाज धर्म की मर्यादा को किस प्रकार कायम रख सकेगा ?

साधु वर्ग पर जब समाज-सुधार का भार भी होगा तब उसके चरित्र की नियम परम्परा मे वापिस पहुँचने से चरित्र मे न्यूनता आ जाना स्वाभाविक है। इस प्रकार आज का साधु समाज वडी विषम अवस्था मे पडा हुआ है। एक ओर कुआ दूसरी ओर खाई सी दिखाई पडती है।

समाज सुधार का भार साधुओ पर आ पडने का परिणाम क्या हो सकता है, यह समझने के लिए यति समाज का उदाहरण मौजूद है। पहले का यति समाज आज सरीखा नही था। लेकिन उसे समाज सुधार का कार्य हाथ मे लेना पडा। इसका परिणाम धीरे-धीरे यह हुआ कि सामाजिकता की ओर अग्रसर होते-होते उनकी प्रवृत्ति यहा तक वढी कि वे स्वय पालकी आदि परिग्रह के धारक वन गए। यदि वर्तमान साधुओ को समाज सुधार का भार सौंपा गया और उनमे सामाजिकता की वृद्धि हुई तो उनकी भी ऐसी ही—यतियो जैसी दशा होना सभव है। अतएव साधु समाज के ऊपर समाज का होना

न होना ही उत्तम है। साधुओ का अपना एक अलग ही कार्य क्षेत्र है। उससे बाहर निकल कर भिन्न क्षेत्र भी अत्यत विस्तृत और महत्त्वपूर्ण है।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि ऐसा कौनसा उपाय है जिससे समाज सुधार का आवश्यक और उपयोगी काम भी हो सके और साधुओ को समाज-सुधार मे न पडना पडे।

हमारे समाज मे मुख्य दो वर्ग हैं— साधु वर्ग और श्रावक वर्ग। पर उक्त बोझ पडने से क्या हानिया हो सकती हैं, यह बात सामान्य रूप से, मैं बतला चुका हूँ। रहा श्रावक वर्ग, सो इस वर्ग को समाज सुधार की प्रवृत्ति करनी चाहिए। मगर हमारा श्रावक वर्ग दुनियादारी के पचड़ो मे इतना अधिक फंसा रहता है और उसमे शिक्षा का भी इतना अभाव है कि वह समाज सुधार की प्रवृत्ति को यथावत् सचालित नही कर सकता। श्रावको मे धर्म सम्बन्धी ज्ञान भी इतना पर्याप्त नही है, जिससे वे धर्म का लक्ष्य रखकर धर्म-मर्यादा को अक्षुण्ण बनाए रख कर, तदनुकूल समाज सुधार कर सके। कदाचित् कोई विद्वान् श्रावक मिलता भी है तो उसमे श्रावक के योग्य आदर्शचरित्र और कर्तव्य निष्ठा को भावना पर्याप्त रूप मे नही पाई जाती। वह गृहस्थी

के पचडो में पडा हुआ होता है। अतएव उसकी आव-श्यकतायें प्राय समान्य गृहस्थो के समान ही होती है। ऐसी स्थिति मे वह अर्थ के घरातल से ऊपर नही उठ पाता और जो व्यक्ति अर्थ के घरातल से ऊपर नहीं उठा है, उसमें निस्पृह, निरक्षेप भाव के साथ समाज सुधार के आदर्श कार्य को करने की पूर्ण योग्यता नहीं आती। उसे अपनी आवश्यकतायें पूर्ण करने के लिए श्रीमानो की ओर ताकना पडता है, उनके समाज हित विरोधी कार्यो को सहन करना पडता है। इसके अतिरिक्त त्याग की मात्रा अधिक नही होने से समाज मे इसका पर्याप्त प्रभाव भी नही पडता। इस स्थिति मे किस उपाय का अवलम्बन करना चाहिए, जिससे समाज सुधार के कार्य में रुकावट न आवे और साधुओ को भी इस कार्य से अलहदा रखा जा सके। आज यही प्रश्न हमारे सामने उपस्थित है और उसे हल करना अत्यावश्यक है।

मेरी सम्मति के अनुसार इस समस्या का हल ऐसे तीसरे वर्ग की स्थापना करने से हो सकता है—जो साधुओ और श्रावको के मध्य का हो। यह वर्ग न तो साधुओ मे परिगणित किया जाय और न गृह कार्य करने वाले साधारण श्रावको मे ही। इस वर्ग मे वे ही व्यक्ति समाविष्ट किये जाय जो ब्रह्मचर्य का अनिवार्य रूप से पालन करें और अकिंचन हों अर्थात् अपने लिए

धन संग्रह न करे। वे लोग समाज की साक्षी से, धर्माचार्य के समक्ष इन दोनो व्रतों को ग्रहण करे। इस प्रकार के तीसरे त्यागी श्रावक वर्ग से समाज सुधार की समस्या भी हल हो जायेगी और धर्म का भी विशेष प्रचार हो सकेगा। साथ ही निर्ग्रंथ वर्ग भी दूषित होने से बच जाएगा।"

श्रीमद् जवाहराचार्य म० सा० ने आज से साढे चार दशक पूर्व जिस 'तृतीय त्यागी श्रावक वर्ग' की अभिनव कल्पना की थी, यह कहना असंगत न होगा कि स्थानकवासी संप्रदाय के समक्ष ही नही वरन् भारत के सभी धर्मों के मध्य यह एक क्रान्तिकारी पहल थी। युग से आगे युगाचार्य चलते है। वे वर्तमान की नब्ज पर अंगुली रखते है, अतीत का घटित उन्हे परिदर्शित रहता है, भविष्य की वे मात्र आकाशी कल्पना ही नही करते बल्कि समयागम की काल-पत्री का अक्षर-अक्षर पढ सकने की तीव्र मेधा धारण किए हुए होते हैं। उनके वचन खाली नही जाते। उनके स्वप्न साकार होते हैं। उनकी कल्पना आकार ग्रहण कर जगत् और जीवन को अपनी परिधि मे समेट लेती है। अत महापुरुषो को त्रिकालज्ञ कहा गया है।

आज आप विश्व घटनाक्रम को देखिए। ससार मे

(५) साधुओं और श्रावकों द्वारा क्रमश मर्यादा व सासारिक बाधा वश सम्पन्न न हो सकने वाले धर्म-कर्म का नियमन करेगा।

(६) ऐसे साधु जिनसे न तो साधुत्व पूरा निभ पाना सभव हो और न ही जो साधु-ढोंग ही छोड पाये, इनको इस वर्ग मै स्थान मिल सकेगा ताकि वे ढोंग-पाप के दोष से बच सके।

विचार-बीज नष्ट नहीं होता

हर क्रिया का काल होता है। देश, काल, परि-स्थिति तथा युग सक्रमण की कई सस्थितिया किसी कार्य को आनन फानन मे करवा डालती है, कइयो को कालान्त प्रतीक्षा करनी होती है। धर्म और स्वतत्रता का विचार बीज कभी-नष्ट नही होता। हर्ष का विषय है कि जैनाचार्य पूज्यपाद श्री जवाहराचार्य की तृतीय त्यागी श्रावक सयोजना आचार्य श्री के जन्म शताब्दी वर्ष मे अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ, द्वारा क्रियान्वित की गई है। उपासक, साधक, मुमुक्षु सदस्य श्रेणियो के साथ यह 'वीर संघ' (१) निवृत्ति (२) स्वाध्याय (३) साधना और (४) सेवा। इन चार आधार स्तम्भो पर सुदृढत स्थापित किया गया है। युग प्रबोधक श्रीमद् जवाहराचार्य म० सा० की मूल क्रान्ति भावना

का यह आधुनिक सस्करण है।

एतत् अनुशासनम् एवं उप सितव्यम् (तेतरियोपनिषद्)

समाज सरक्षणार्थ सर्वोपरि आचार्यों का अनुशासन राज-रक्षार्थ सत्ताधीशो का शासन। लोक प्रवज्यार्थ सिद्ध आसन।

आचार्यों को महानिर्ग्रन्थी पद-मान दिया गया है। नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, प्रधान, अपेक्षा तथा भावादि अष्ट महानो मे इनकी गिनती होती है।

'जीवन-धर्म' जोधपुरीय व्याख्यानो की आचार्य प्रवर की पावन वाणी की प्रतीक पुस्तक के "श्रीजिन मोहनगारो छे"-पृष्ठ ११ मे आचार्य श्री ने फरमाया है-

"सामाजिक जीवन को सुधारने का आशय है जीवन मे नैतिकता लाना। नीति धर्म की नीव है। सच्ची धार्मिकता लाने के लिए नीतिमय जीवन बनाने की अनिवार्य आवश्यकता है। अनेक सामाजिक कुरीतिया इस प्रकार के जीवन निर्माण मे बाधक होती हैं।

साधु ऐसा चाहिए

पूज्यपाद स्व० आचार्यवर श्री १००८ श्री श्रीलालजी म० सा० कहा करते थे कि आचार्य को ना पत्थर सा कठोर, ना पानी सा नम्र वल्कि उसे वीकानेरी मिश्री

के कुंजे के समान होना चाहिए।

आचार्यत्व का प्रकर्ष :

'ठाणांग' सूत्र के तीसरे स्थान मे तीन प्रकार के आचार्य बताए गये हैं। (१) कलाचार्य (२) शिल्पाचार्य और (३) धर्माचार्य। धर्माचार्य के तीन गुण शास्त्रोक्त हैं–

(१) गीतार्थी
(२) अप्रमादी
(३) सारणा-वारणा नियामक।

भारतीय समाज की अंतरात्मा का भाष्यकार, यदि धर्माचार्य परम्परा में कोई लोक प्रभावी सिद्ध हुआ है तो श्रीमद् जवाहराचार्य !

विरले ही होगे आचार्य प्रवर सरीखे स्पष्ट वक्ता तथा जन-समाज की रग-रग के पारखी युग-प्रधान। मुनि श्री गणेशीलालजी म० को युवाचार्य पदवी-प्रधान महोत्सव मे अजमेर मे आपने कहा—

'आचार्य का काम चतुर्विध सघ में— सारणा, वारणा, धारणा, चोयणा और पचोयणा करना है। इन कामो के लिए यदि चतुर्विध सघ सहायता न दे तो आचार्य को कठिनाई में पड जाना पड़े और आचार्य पद का गौरव भी न रहे। ××× छद्मस्थ होने के कारण

यदि आचार्य से कोई भूल हुई हो तो आचार्य को उनकी भूल सुझाकर न्याय-पथ पर लाना उचित है, लेकिन इस ओर से उपेक्षित रहना सर्वथा अनुचित है।'

सघ की सामग्री (एकता-सगठन) सुखकारक है और सगठित रहने वाले श्रावक-श्राविका–साधु-साध्वी चतुर्विध सघ का तपश्चरण भी सुखकारक होता है।

२

रूढ़ि मुक्त समाज

सदियो की दासता की विचित्रतम— मानसिक कुंठाओ, भयंकरतम अंध परम्पराओं, चूल्हा-चौका पथी धरम-करम की झंझाओ— झूठे झमेलो और मनगढन्त पोंगापंथी धारणाओ से ग्रस्त, त्रस्त एवं कूट अभ्यस्त भारतीय समाज-भीरुओ, धर्माडम्बरियो एवं आत्म-घोषित भगवानों की शोषणमूलक, मानवद्रोही नितान्त अवैज्ञानिक व्यवस्थाओ एवं प्रपंची प्रस्थापनाओं के विरुद्ध श्रीमद्‌जवाहराचार्य ने जीवन पर्यन्त अपनी वीर-वाणी का धर्म युद्ध छेड़े रखा। समाज और राष्ट्र की मूल धारा को निर्बल बनाने वाले रूढि-रक्षको के आगे वे अहिंसक योद्धा के रूप मे अनमी सिद्ध हुए।

अर्द्धशताब्दिकालिक अपने — चरैवेति-जीवन-विहारो मे उन्होने भारत के लाखों लोगों के मानस रूढि-वाद से परामुख किए। आचार्य गण भाषणशूर ही नही होते, वाग्विलास से वे दूर रहते हैं, मिथ्या-प्रचार के दोषो से सावधान रहते हुए वे हमेशा सत्य ही बोलते हैं,

सत्य के सिवाय कुछ नही वोलते। सत्य खरा होता है और खारा भी। मीठा सा लगता है स्वार्थ वचन। लोकाचरण उससे सुधरता नही।

आचार्य प्रवर श्रीमद् जवाहरलालजी का रूढि-धारा पर जब तर्काधारित तीक्ष्ण प्रहार होता था तव समाज के कुचले हुए, चिथे दवे और परित्यक्त-अशक्त वर्ग की रगो मे नवीन जीवनदायिनो रक्तधारा प्रवाहित हो उठती थी। हिंसक से हिंसक का कलेजा हिल जाता था। शिकारियो की वन्दूकें औंधी हो जाती थी। राजवी-ाटवी मद्य-मास त्याग की घोषणायें ही नही करते वल्कि उनका त्याग उनकी जीवनधारा ही वदल देने ाला सिद्ध हुआ है। रियासती जुल्मो की शिकार जनता के समक्ष जव एक रूढि चुस्त धर्म-सघ का क्रान्तिचेता ाचार्य रूढिमुक्त समाज का मानचित्र प्रस्तुत करता व लोगो को ऐसा लगता था कि धर्म-क्रान्ति का यह रोधा अपनी कठिनतम आर्ष परम्पराओ और मर्यादाओ आवद्ध होकर भी एक मुक्तकाम लोकात्मावतार सा ोक मे विचर रहा है।

व प्रत्यक्ष है

क्या परोक्ष है

महापुरुष द्रव्य-भाव गाठ खोलकर समाज की मन

गाठे खोलते है । वे जानते है कि जो पानी बहता नही वह गदला जाता है । धर्म ठहरता नही एक जगह, बलि-पशु सा खूंटे पर बंधता नही । जगली झरने सा वह लोक सत्य का सगीत निनादित कलकलायित करता रहता है । उसकी यात्रा अनन्त । उसका लक्ष्य लोकाभिराम । धर्म, गंग धारा है । उसमे विसर्जित होकर तो देखो ! वह अपिचेत मुदुराचारी को भी पवित्र करता है । धर्म का मूल बीज मानव को—प्राणी मात्र को मान्य कर उसे कर्म-भवो से मुक्त करने के लिए धर्माचार्य उसे प्रतिश्रुत करते है ।

समाज क्रान्ति प्रचेता राजा राममोहनराय, स्वामी दयानन्द, पुण्य श्लोक विवेकानन्द, स्वामी राम-तीर्थ, महात्मा गाधी प्रभृति भारत विभूतियो ने भारतीय समाज को रूढिबन्धनो से मुक्त करने के लिए अपना जीवन होमा । विशुद्ध धर्म क्षेत्र मे श्रीमद् जवाहराचार्य को ही यह युग-गौरव दिया जाएगा कि उन्होंने अपने जमाने की कठिन-सकीर्ण हठाग्रहिताजी वाली दम्भिक धर्मान्धता मे व रूढियो के विरुद्ध उठ खडे होने का लोकोत्तर साहस प्रदर्शित कर जनता का महान् उपकार किया ।

स्वर्गीय राष्ट्रकवि 'दिनकर' को राजस्थान की

राजधानी मे, 'मनीषी'— साहित्य की सर्वोच्च उपाधि दी जा रही थी। उस दिन राज भवन मे (जहा वे ठहरे हुए थे) मुझसे बोले—ये उपाधिया क्या हैं व्याधियाँ हैं। रूढिया है। इनको नकारो तो इसका तात्पर्य है आपके नकार के पीछे अपरोक्ष स्वीकार का छद्माचारी आक्रोश है। उन्होने कहा—जीवन मे सब कुछ प्रत्यक्ष है, कुछ भी परोक्ष नही। उनकी वाणी कहती है—

धर्म, अर्थ, है, काम, मोक्ष है,
सब प्रत्यक्ष है, क्या परोक्ष है।

वस्तुत अप्रकट न पाप है, न पुण्य। लोग हर क्षेत्र मे दूकानदार बन बैठे हैं। अब तो विश्वव्यापी स्तर पर धर्म, साहित्य, सस्कृति, कला, राजनीति, सत्ता, पू जी तथा मानव-शाति व कल्याण के नाम पर समाज को एक अत्याधुनिक रूढ तकनीकी-झूठ और फरेब का शिकार होना पड रहा है। वैभव सम्पन्न राष्ट्रो में भ्रष्टाचार का भी एक शिष्टाचार पनपता जा रहा है।

राष्ट्र को इन रूढिवादी प्रतिगामी शक्तियो से लडने, इन सकीर्ण साम्प्रदायिक शक्तियो से झूझने तथा मानसिक तौर पर अग्रेजियत के दासानुदासो के रूढ-ज्ञान को तिरोहित करने के प्रति आपात्कालीन आनुशासनिक मर्यादाओ के अन्तर्गत जिस कठिनाई से

गुजरना पड़ रहा है, इसकी तह में अब हर दायित्व बोध-शील नागरिक-मतदाता को जाना पडेगा। रूढिवाद, शोषण का पोषण करता है। शोषण से गरीबी बढती है। गरीबी से देश दरिद्री होता है। दरिद्रो देश और व्यक्ति का न कोई धर्म होता है न कोई मर्यादा।

आचार्य प्रवर श्रीमद् जवाहर ने भारतीय जनता के रूढि जन्य दैत्याचार (विरुद्ध आचार) से दुखी होकर कई बार कहा—यह गरीबी अमीरी को निगल जाएगी।

एक और ऐतिहासिक २० सूत्री योजना :

श्रीमद् जवाहराचार्य के जोधपुरीय धर्म प्रवचनो की एक प्रभावक कृति है–'जीवन-धर्म'। इस पुस्तक मे एक अध्याय है "परमात्म प्राप्ति के सरल साधन।" आपको आश्चर्य होगा कि आज से दशकों पूर्व एक धर्मा-चार्य के मस्तिष्क मे, भारत को रूढि मुक्त करने की एक क्रांति-मगला योजना के बीज वपित हुए। ज्ञान की सहज समाधि का यही लाभ समाज के समक्ष आज प्रस्तुत है।

एक ओर हम आर्थिक स्वराज्य की जीवन-मरण स्वरूपी लडाई, इस देश की गरीबी के उन्मूलन के परि-प्रेक्ष्य मे लड रहे हैं— लडाई लम्बी है और जारी है। इसी प्रकार समाज की रूढ़ि-शृंखलाओं को छिन्न-भिन्न करने के लिए श्रीमद् जवाहराचार्य प्रणीत एक बीस सूत्री

समाजोद्धारक-तारक योजना चुनौती के रूप मे युग का विराट सत्य और चैतन्य लिए सप्रस्तुत है।

रूढ़ि-मुक्ति के २० सूत्र :

(१) जुआ निषेध।
(२) मासाहार निषेध।
(३) मद्यपान निषेध।
(४) वेश्यागमन निषेध।
(५) परस्त्री गमन निषेध।
(६) शिकार-त्याग।
(७) चोरी का त्याग।
(८) विवाहो मे अश्लील नाच-गान निषेध।
(९) मृत्यु पर दिखावटी रोना-धोना नही।
(१०) भय—मुक्ति।
(११) मृत्यु भोज निषेध।
(१२) अन्न की रक्षा।
(१३) दहेज निषेध।
(१४) वैवाहिक उम्र निर्धारण (बाल विवाह निषेध)।
(१५) नर्तकियो का नाच रग निषेध।
(१६) अष्टमी-चतुर्दशी उपवास विधान।
(१७) अस्पृश्यता-उन्मूलन।

(१८) आलसीपन का त्याग।
(१९) संयमित जीवनयापन।
(२०) चर्वी वाले वस्त्रो के पहिनने का निषेध।

यह है परमात्म प्राप्ति की सरल-साधना। चिन्तन के तले उतरे तो परमात्म तत्त्व सम्मुख आता है। शास्त्र कहता है—

उद्धेरदात्मानात्मानं, नात्मा न वसाययेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो, बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥

—आत्मा से आत्मा का उद्धार करो। आत्मा को अवसादित मत करो। आत्मा ही आत्मा का मित्र और शत्रु है।

भारतीय आत्मा दुखी है। हम एक विकासशील राष्ट्र के सघर्षमान नागरिक है। हमें अपने राष्ट्र की पाई-पाई बचानी चाहिए। वहां हम सामाजिक रूढियो तथा व्यसनो मे फंसकर प्रतिवर्ष मद्यपान, जुए तथा विलासिता मे— इस गरीब देश की अरबो की सम्पत्ति फूंक देते हैं।

मन-वचन और कर्म से एक ओर से नेक होकर हम अपने ज्ञानी-पुरखों की बातो पर गौर करे और उनकी राष्ट्रीय भावनाओं का समादरण अपने आचरण मे करें।

संदर्भित समाज सुधार विषयक २० सूत्री योजना के कई सूत्र हमारे लडखडाते राष्ट्रीय अर्थतंत्र को सुदृढ एव सुस्थिर कर सकते हैं। अन्न की बर्बादी—वैवाहिक अपव्यय आदि ऐसे पहलू हैं।

जागे तभी सवेरा

भारत कृषि प्रधान देश है। गौ वश इसकी आधार-रीढ है। समाज पशुवत्–पशुओ पर— अत्याचार करता है, उन्हे दुखी करता है। आवश्यकता, गोरक्षा हेतु नारे लगाने और प्रदर्शन करने की नही—"गऊमाता गोमती" का रूढि-वचन उच्चारने वाली तथा दान मे दतहीन बूढी गाय को देकर गऊ-दानी ! मोक्षकामी रूढ-मतियो को यह समझाने की है कि—भाई गोवश बचाना चाहते हो तो गोपालन का महत्त्व समझो।

आचार्य प्रवर का घाटकोपर (बम्बई) प्रवास-कालीन एतद् विषयक प्रवचन ध्यातव्य है—

"शास्त्र मे लिखा है कि प्राचीनकाल मे श्रावक जितने करोड मोहरो का व्यापार करता, उतने ही गोकुल का पालन करता था। जिस समय भारत मे गौओ का ऐसा मान था उस समय भारत वैभवशाली क्यो न होता ?"

वस्तुत इस बात को अब देश के योजनाकार भी मानने लगे हैं कि गोपालन राष्ट्रीय-कृषि-तत्र के लिए

अत्यावश्यक है। गोबर-गैस से ऊर्जा संप्राप्ति के वैज्ञानिक प्रयोग सिद्धभूत हो चुके हैं.

हम बातों ही बातो मे अब अधिक समय नही गवा सकते। मनुष्य, पशुओ का वंश उजाड कर सुखी नही रह सकता। जिम्मेवार हम हैं, अपनी दुर्दशा के कारण—

"हिन्दू लोग भी किसी न किसी रूप में गो वंश के विनाश मे सहायक हो रहे हैं। उदाहरण के लिए वस्त्रों को लीजिए। गाय की चर्बी वाले वस्त्र बड़े शौक से पहने जाते हैं। क्या गाय की हत्या किये बिना चर्बी निकाली जाती है?"

['आचार्य जीवन'—जीवनीग्रथ पृ० १४१]

गणाधीश आचार्य प्रवर का प्रतिबोध हम अब नए परिप्रेक्ष्य मे 'स्वदेशी-भावना' से ग्रहण करे। गाय हमारी अर्थतात्रिक कृषि-औद्योगिकाश्रित–किसान जनता की आधारभूत जीविका-वाहिका है.। वह निरीह पशु नही—वह किसान का जीवन धन है। हम चेते, हम देखे, युगानुकूल मानमूल्यो से नए अर्थ ग्रहे। चर्बी लगे वस्त्र मत पहनो—इसका आर्थिक महत्त्व है–स्वदेशी पन-पाओ। गाधी के चर्खे को मिल के मशीनी दातों से बचाओ। करोड़ो गरीबो को दूध-घी तथा पौष्टिक अन्न

की तो बात छोडिए पूरा पेट भरे, जितना अन्न तक नसीव नही होता। तो, फैशन रूढि है। विलासिता दिखावा है। यह रूढ प्रदर्शन है।

आचार्य प्रवर द्वारा उद्वोधित वम्बई महानगरी की जनता ने "घाटकोपर सार्वजनिक जीव दया मडल" की जो स्थापना की आज से दशको पूर्व महाराज श्री के प्रेरणापरक उद्वोधनो से जगह-जगह जो पिंजरापोलें-गोशालाएँ खुली–उन्हे वचाने का दायित्व हमारा है।

जागे तभी सवेरा। एक वात और। किसी महापुरुष या सत ने अपने जीवन काल मे जो वात ज्ञानगम्य व अनुभव गम्य रूप मे समाज के समस्त लोक हितार्थ प्रस्तुत की उसको हम उसकी मूल भावना के परिदृश्य मे धर्माचरणीय मर्यादा व मान-व्यवस्थान्तर्गत आधुनिक रूप दें। इसका निषेध कभी नही हो सकता।

विवेक और विनय से समाज समझेगा। वीतराग भावना के लोग जिन्होने समाज-गृहस्थ के प्रपचो से किनारा कर लिया हो, उन्हे भी जव मानवीय करुणा का दायित्व वोध होता है तव वे रूढिपथी धारणाओ से जूझने मे नही हिचकते।

महाजन सूदखोर नहीं होता .

सूदखोरी पाप है। आज देश सूदखोरी के विरुद्ध

की अदायगी का ठीक ठीक ध्यान रखें।

(३) चक्रवर्ती ब्याज न जोडा जाय।

(४) यदि किसान और साहूकार के बीच मे झगडा हो तो उसका फैसला गाव-पच करे।

(५) पच—न्यायोपरान्त कोई पैसा अदा न करे तो साहूकार न्यायालय मे नालिश करने को स्वतत्र है।

(६) जैनेतर मडली इससे आगे दशहरे पर भैसा नही मारेगी। इसके अतिरिक्त अन्य दिनो मे भी हिंसा करने की हमने आज से बन्दी करदी है।

इसे कहते अहिंसक क्रान्तिमूलक, लोक हृदय परिवर्तन मूलक समग्र-क्रान्ति। समग्र क्रान्ति के नाम पर राष्ट्र को उत्तेजक भाषरा देकर भडकाने से भूखो के पेट नहीं भरते। शोषरा का खातमा हल्ला मचाने से नही होता। नारो से न न्याय मिलता है न किसी का कलेजा हिलता है।

वडे आश्चर्य की बात है कि— आज का भारतीय समाज राजा-महाराजाओ-जागीरदारो और भू-धनपतियो के स्वामित्व व एकाधिकारवादी स्वेच्छाचारिता से तो मुक्त है। पर एक चक्रवर्ती सम्राट का शासन वह अपने

कधों पर अभी भी ढो रहा है। चक्रवर्ती-व्याज। इस रूढ-मार्गी साम्राज्य का अंत निकट है।

जहा अधेरा होगा— दीप जलेगा। जहा समाज भटकेगा—सत्ताधीशो का कोरा कानून नही सतों की वाणी, आचार्यों का प्रतिबोध, फलेगा। आचार्य श्री जवाहर वाणी का प्रवाह झेलिए—

"शस्त्र से जिस प्रकार हिंसा होती है, उसी प्रकार लोगो के पास से अधिक व्याज वसूल करने अथवा अन्याय पूर्वक दूसरे की सपत्ति हजम करने से किसानो के गले कटते है। ऐसी दशा मे— बेचारे किसान के स्त्री-वच्चे मारे-मारे फिरते है।"

नान्दर्डी ग्राम मे उच्चरित यह प्रवचन-वाणी भारत मे तब तक संघर्षमयी— ओजस्विता लिए रहेगी जब तक व्याज का चक्रवर्ती दु शासन है।

व्याज को पुत्र से अधिक कमाई के मामले मे वरेण्य मानने वाला समाज चेतेगा और जरूर सभलेगा।

अल्पारंभ–महारंभ का वस्तु-दर्शन :

प्रत्येक युग-पुरुष के समक्ष काल-चुनौतियां के जलते हुए सवाल्नात होते है। अज्ञान मूलक रूढि-दृढ विवादी पंडितो का कुतर्क जाल हर युग मे विछा रहता

है। ज्ञानी ज्ञान से और अज्ञानी अज्ञान से— उसको पारते हैं। आचार्य श्री जवाहरलालजी म० सा०के समक्ष जैन-जगत् मे छिडा अहिंसा सर्दभित अल्पारभ-महारभ का विवाद बडा उग्र था। कृषिकर्म पाप जन्य मानने वाले लोगो के समक्ष आचार्य श्री अपनी बात कितनी मार्मिकता और तार्किकता से रख कर लोक समुदाय को अहिंसा की सकीर्णवादी व्याख्या से मुक्त करते हैं, यह अग्राकित कथन से स्पष्ट होता है—

"लोगो ने कृषि कर्म को महापाप और खेती करने वाले को महापापी मान लिया है। पर खेती से उत्पन्न होने वाले अन्न को खाने मे भी पाप मान लिया तो कैसी विडम्बना खडी होगी? लोग असत्य भाषरा, मायाचार, धोखा और जुआ खेलने मे अल्पारभ मानते हैं और खेती करने मे महापाप मानने मे सकोच नही करते। यह उनकी गभीर भूल है। ऋषभदेव ने सर्वप्रथम हल हाका था। जब कल्पवृक्षो से आजीविका का निर्वाह होना मभव न रहा और मनुष्य कोई भी कला नही जानते थे उस समय अगर उन्होने हल चलाकर आजीविका की समस्या हल न की होती तो मनुष्यो की क्या दशा होती? उन्होने पुरुषार्थ करने का उपाय बताया और स्वय हाथ मे हल पकड कर जनता को

समझाया—देखो, यह भूमि रत्नगर्भा है। इसमें से रत्न निकालते रहो। इसका कभी अत नही आएगा।

[जवाहर विचार सार–पृष्ठ २४१]

अहिंसा की कालजयी झूझ ·

आज परिस्थितियां वो नही रहीं जो–पूज्याचार्य के समक्ष थी। पर ये सब बाते इस बात को सिद्ध करती हैं कि युग-युग मे आचारवान महान् पुरुषो के समक्ष अज्ञान का दैत्य किस तरह अड कर खड़ा हो जाता है। विचार-क्रान्ति की प्रक्रिया कभी धीमी-धीमी बहुत धीमी चलती है, कभी एक—अल्पकालिक अवस्था मे ही युग-युग की कुव्यवस्थाये धराशायी हो जाती हैं।

कार्ल मार्क्स हो या कन्फ्यूशियस, भगवान् बुद्ध, महावीर, गाधी या जवाहराचार्य। सबको अपने-अपने काल की क्रूर रूढियो से— लडना पडा है। रूढिग्राही पूंजीवाद का पैतरा—अभी भी नही बदला है। छद्म समाजवाद के नाम पर तानाशाही ताकतो के दात अभी भी पैने हैं। उसी तरह सकीर्ण अहिंसा का दौर भले आज अल्पारभ–महारभ के विवाद रूप मे जिन्दा होकर भी मदा पडा हो, पर क्राति–चेता–भगवान् महावीर और गौतम बुद्ध की अहिंसा को एक विदेशी ताकत के सामने चर्खा हाथ मे उठाकर, रामधुन लगाकर, देश मे—स्वदेशी

पन जगाकर जो कार्य महात्मा गांधी ने अहिंसा के सत्या-न्वेषित और युग परिष्कृत परिवेश मे प्रचारित-प्रसारित किया था, उस आर्थिक स्वराज्य का लोक सघर्ष स्वाधीन भारत मे जारी है। यह सघर्ष अनश्वर है। कारण यह देश खून वहाने मे नही, खून का प्यार जगाने मे अहिंसा जन्य लोक सत्य का आसरा नही छोड सकता। युग को हिंसा का महारभ उसके सामने है। उससे उसे घर वाहर झूझना है—यह झूझ कालजयी है।

मित्रो ! जरा विचार करो

सवत् १६६० के उदयपुर चातुर्मास के पश्चात् आचार्य प्रवर ने अपने विहार-काल मे जावद की जनता के समक्ष मृत्यु भोज रूपी महाराक्षसी रूढि के विरुद्ध जो प्रवचन दिया, वह युग-युग तक चिर अमर रहेगा। प्रवचन-वाणी—

मोसर (मृत्यु भोज) का जीमना महाराक्षसी भोजन है। वह गरीबो को अधिक गरीब बनाने वाला और धनवानो को दयाहीन बनाने वाला है।

इस कुरीति ने अनेक गरीबो का सत्यानाश कर डाला है। धनवान लोगो को पैसे की कमी नही। वे इस प्रसग पर पैसा लुटाते हैं और गरीबो पर ताने कसते हैं। वेचारे गरीब जाति मे अपनी प्रतिष्ठा कायम रखने के

कैसा राक्षसी कृत्य किया जा रहा है ?"

[जीवनी ग्रथ—आचार्य जीवन, पृष्ठ २३२]

यह कथन नही, उद्धरण नही, मात्र वचन नही, यह तात्कालिक और वार्तमानिक युग व्यथा का मार्मिक करुणा लेख है। कालपट पर इसके अक्षर अमिट है। कानून है। दड है। जेट—कम्प्युटर युग है। पर ऐतोपरान्त मौसर चालू है। गति धीमी है पर सामाजिक दम्भ-वादिता जन्य नामवरी व देखा देखी चाल का जमाना बीता नही है। भारत की जनता की करोडो-अरबो की सदियो की कर्जदारी का यह दुखद रूढि-पाप है—मोसर।

क्या हमे देश, धर्म, समाज और जाति के साथ-साथ आम आदमी की लोक लज्जा का कुछ भी ध्यान है। आचार्य श्री के सन् १९२७ के भीनासर (बीकानेर) चातुर्मास प्रवचनो की ग्र थिका 'दिव्य सन्देश' पर 'सच्चे सुख का मार्ग' शीर्षक लेख के १०१ वे पृष्ठ पर पुण्य श्लोक पूज्यपाद जवाहराचार्य फरमाते हैं—

'मृत्यु भोज आदि की बुरी-रीतियो को हटा दीजिए। × × × × इससे आपके देश की, जाति की, और धर्म की लज्जा रहेगी।'

धर्म गुरु-सत-आचार्य युग विचारक श्रीमद् वाणी पर अब तो समाज ध्यान दे। अब तो समा

भारत के समाजवादी श्रावको का कलेजा पसीजे !

चतुर्भुज बनो, चतुष्पाद नहीं

भारतीय समाज को जर्जरीभूत करने की दिशा में विवाह-संस्था की स्वार्थिक रूढियो और—हीन-ग्रथियों ने घोर कदाचार फैला रखा है। भारत का आज का समाजवादी गणतत्रात्मक धर्म निरपेक्ष लोकतत्र श्रीमद् जवाहराचार्य सरीखे युग-प्रबोधको का चिर ऋणी रहेगा जिन्होने बाल विवाह, अनमेल विवाह, दहेज, ठहराव, वैवाहिक अपव्यय, अश्लील नाच-रग तथा लोक दिखावे की जो भर्त्सना आज से दशकों पूर्व की, उसकी लोक प्रभावना, देश के युवा नेता सजय गाधी प्रभृति अनेको राष्ट्र सेवको व सन्नारियो ने—पुनः दहेज-उन्मूलन परि-प्रेक्ष्य में ग्रहण कर लोक जागरण का कम्बुनाद किया है। सरकार ने—सांसदिक विधियो व राज्य सरकारों ने क्षैत्रीय–कानूनो द्वारा भी भारत के नौजवानो व नव-युवतियो के वैवाहिक क्रय-विक्रय को कुचलने मे कोई कसर नही उठा रखी है। 'शारदा एक्ट' कभी का पास हुआ पडा है।

पर बात का सूत्र फिर— सामाजिक परिप्रेक्ष्य में एक ही ध्रुव केन्द्र पर आकर ठहर जाता है—कानून नही

करुणा—समाज की कम से कम भारतीय समाज की आत्मा को हिलाएगी

श्रीमद् जवाहराचार्य ने समाज की वैवाहिक कुप्रथाओ, अनाचारीय आधारो, आर्थिक दुराचारो तथा जघन्य पापाचारो पर अपने जीवन काल मे स्थान-स्थान पर आयोजित प्रवचनो मे, प्रबलतम प्रहार किए हैं, लोगो को जगाया है, उन्हें चेताया है। पर समाज की मूर्च्छा अभी पूरी तरह नही टूटी।

कहना होगा कि युगाचार्य श्रीमद् जवाहर की वाणी का लावा बडा तेजोमय था। बहुत पिघला युग का कच्चा धात। पर पहाड सी रूढियां! मुट्ठी भर हाड़ वाली एक देह-वाणी! जमाना साक्षी है— युग सत्य-रक्षा के सघर्ष का।

विवाह का मार्मिक उद्देश्य समझाते हुए-आचार्य श्री फरमाते हैं—

"विवाह का उद्देश्य चतुष्पाद बनाना नही, चतुर्भुज बनाना है।"

['दिव्य जीवन' ग्रथाक १४०]

इसका अर्थ व्यापक है। चतुर्भुज बनो। उद्योगी बनो। चार हाथ हिलेंगे तो पाषाण भी पिघलेंगे।

चतुष्पाद बनकर अविवेकी काम कामना जन्य सख्या वृद्धि से देश दरिद्री होगा। पाठक बधुओ ! इस चतुष्पाद और चतुर्भुज की शब्द युग्मिता के द्वैताद्वैत पर गभीरता पूर्वक मनन करो— क्या यह भारतीय परिवार-व्यवस्था और नियोजन का कल्याण मंत्र नही है।

कन्या-विक्रय एक महापाप

बेटा—बेटी का विक्रय अपराध है। विवाह के नाम पर सौदा है। यह अमानवीय दास-प्रथा है। यह बाजारु सट्टा है। समाज इससे कब मुक्त होगा ? इस सौदागर समाज को क्या भयकर ठोकर खाने की प्रतीक्षा है ?

धर्म को जय बोलने वाले और धर्माचार्यों से गुण-गान गाने वाले भारतीय सुनें, श्रीमद् जवाहर वाणी— "मेरा अधिकार सिर्फ कहने का है, इसलिए कहता हूँ कि कन्या के बदले रुपये लेना महापाप है और इस तरह का रुपया लेने वाले का भला होता देखा नही जाता।"

[दिव्य जीवन ग्रथाक १६४]

अशक्ति का स्वागत !

भारत मे आज भी प्रतिवर्प हजारो—वाल विवाह होते है। मा वापो की गोदियो मे सोए वीद-वीदणियों के फेरे ये वनकीट पडित करवाते है। गर्भस्थ शिशुओं की सगाइया तय हो जाती है। वर-वधुओ की ये अवोध

वाल जोड़िया जव चंवरियो मे 'फेर' खाती हैं, यज्ञ-धूम से जव इनकी आंखे जुलजुलाती हैं तव—इस क्रूर समाज पर आक्रोश आता है। वाल विवाह कानूनन अपराध है, सामाजिक पाप है, मानवीय अभिशाप है।

श्रीमद् जवाहराचार्य ने भीनासर-चातुर्मास के दौरान इस कुरूढ़ि पर सिंह गर्जना करते हुए समाज से कहा—

"वाल विवाह करना अशक्ति का स्वागत करना ही है। इसका मूलोच्छेदन करके सन्तान का और सतान के द्वारा समाज एवं राष्ट्र का मगल साधन करे।"

[दिव्य सन्देश, ग्र थाध्याय-रक्षा बधन-पृष्ठ ३८]

भारतीय राष्ट्र सख्यासुर के काल-मुख मे—सामने से तभी वच सकता है जब हमारी जराजीर्ण और 'आऊटडेटेड'—'करप्ट'— विवाह सस्था का युगान्तरण हो। इसका काया-कल्प तभी हो सकता है जब बाल-विवाह, अनमेल विवाह तथा बहुविवाह जन्य अपराधो के विरुद्ध भारत की युवा शक्ति एक लोकयुद्ध छेड़े।

आचार्य श्री ने फरमाया है—

"जो माता-पिता सन्तान को जन्म देता है पर उसे जीवन की क्षमता देने मे लापरवाही करता है, वह अपने

तह-शोध में जा रहा है।

पहले आदमी हथियारों से, अब कागजों से लड़ता है। उसने कलम-युद्ध तेज कर दिया है। मौत और जिन्दगी कागज पर मडी है।

अनगिनत व्यवसायी, कृषक, गृहस्थी, धर्म-मठपति, मन्दिरों-मस्जिदों-गुरुद्वारों-चर्चपतियो के झुंड के झुंड वकीलों के चक्कर काटते व कचहरियों के फेरे देते-देते कंगाल हो चुके हैं। पर आदमी जात है वही जीवट वाली। वह मान हानि का मुकदमा लडता है—उसे देश हानि, समाज हानि, गरीबो की प्राण हानि की चिंता नही है।

श्रीमद् जवाहराचार्य ने इस रूढ-झूठाधारित फरेबी समाज-व्यवस्था पर सचोट व्यंग्य करते हुए कहा है—

"आज भाई-भाई मुकदमेबाजी में पड़कर हजारों, लाखों रुपया नष्ट कर डालते हैं। सुनते हैं एक—गोदी के मुकदमे मे १७ लाख रुपया पूरा हो गया। ऐसे लोग मैत्री भावना की आराधना कैसे कर सकते हैं ?"

[बीकानेर के व्याख्यान-मंगलपर्व, ६८]

मा भै :

आदमी लडता है। आदमी डरता है। आदमी

गिरता है। आदमी उठता है। वह शेर को मार गिराता है। वह 'हाऊ' के आगे थर-थराता है। जितना बडा आदमी उतना बडा भय। भय, अधविश्वास का सरक्षक। अज्ञान मे फलता-फूलता है भय। अधेरे ठडे क्षेत्रो मे इसका साम्राज्य फैलता है।

'साधु' (बाबा) और सिपाही' (खाकी वर्दी) का भय बिठाकर माता-पिता अपनी सन्तानो को सिद्ध कायर बनाते हैं। 'हाऊ' सरीखी कई कपोल भयकारी कल्पनायें विश्व भर मे व्याप्त हैं।

भय व्यक्तित्व का नाश करता है। आदमी की जडें हिला देता है भय। आदिम साहसिकता के साथ-साथ प्रकृतित भयातुरता भी काम व क्रोध क्षेत्रो मे मनुष्य को विरासत मे मिली है।

इस भय-रूढि पर श्रीमद् जवाहराचार्य ने कहा है—

"मैं सब सन्तों और साध्वियो से यह बात कहना चाहता हूँ कि यदि हमारे श्रावको मे भूतपिशाच आदि का भय रहा तो यह हमारी कमजोरी होगी।"

[श्री जवाहर स्मारक (प्रथम पुष्प) आत्मविभ्रम १८०]

एक सात्विक पुरुष वाणी 'अभयं देहि'— का

गुरुतर वरदान भगवान से मांगती है। वहाँ उसे युग-युग से यह वरद सन्देशार्शी वचन मिलता है— मा भै (तू—अभय हो)।

वस्तुतः आचार्य प्रवर श्रीमद् जवाहर ने लोकभय मुक्ति हेतु चतुर्विध संघ पर जो गुरुतर दायित्व डाला है, उसकी क्रियान्विति होना आज पहले की अपेक्षा अधिक अनिवार्य हो उठा है।

गंदगी हटाओ :

जैसे 'गरीबी हटाओ' एक नारा नही, मात्र राजनैतिक प्रचार और सत्तात्मक अर्थाधार नही है उसी तरह 'गंदगी हटाओ' का उद्‌बोधन भी बहु-अर्थ कामी है।

हर क्षेत्र गंदा है आज तो। राष्ट्र को अपेक्षा है बाह्याभ्यान्तरिक एक राष्ट्र शुद्धि यज्ञ की। वैचारिक अस्वच्छता, कला साहित्य परक अस्वच्छता तथा शारीरिक अस्वस्थता से कही अधिक घातक है सास्कृतिक एवं मानसिक मलीनता।

भारतीय समाज की काया को नीरोग तथा इसकी लोक-माया को अम्लान होने में बचाने का एक ही विकल्प है, एक ही उपाय है और अंतिम पर दूरगामी अवलम्ब कि समाज को पोंगापथी धर्म रूढिजन्य गंदे

विचारो से मुक्त किया जाय। यदि यह नही हुआ तो हमें एक—अकल्पनीय सास्कृतिक कलुषता तथा रुग्णता का सामना करना पडेगा। जल-वायु-प्रदूषणो से कही अधिक घातक और पातक प्रभाव होता है सास्कारिक और वैचारिक प्रदूषण का। 'ब्रेन ड्रेनिग'— 'ब्रेन वाशिंग' और — 'ब्रेन ड्रेनिग—रेजीमेन्टेशन' का खतरा भारत की तरफ पाश्चात्य हिसा-प्रधान क्षेत्रो से आयातित हो रहा है। इस गदगी से देश को बचाओ।

देह शुद्धि अत्यावश्यक है। भारत की आत्मा गावो मे बसती है। उसकी काया पर गदगी के—थेगड़े चढ गए हैं। उन्हे लोक स्वास्थ्य बोध की जरूरत है। क्या कहती है आचार्य-वाणी ?

यह कहां का न्याय ?

"जब मैं किसी श्रावक का घर देखता हूँ तो विचार आने लगता है— क्या सच्चे श्रावक का घर गदा रह सकता है ? लोग कहते हैं—सफाई नही करना भगी का दोष है। पर मै कहता हूँ—गदगी फैलाने वाला दोषी नही और सफाई करने वाला दोषी है ? यह कहाँ का न्याय है ?

[सवत्सरी, १३३]

गुरु सेवा का महत्त्व ही क्या समझा ?

"अगर तुम श्रावक होकर भी अपने घर का कचरा गली के नाके पर विखेर देते हो और गंदगी को वढाते हो तो कहना चाहिए कि—तुमने अब तक यह भी नही समझा कि गुरु की सेवा किस प्रकार करनी चाहिए ? तुम्हे स्वामी वन कर नही वरन् सेवक बनकर जन समाज की सेवा करनी चाहिए। सेवा करते-करते अगर प्राणों का उत्सर्ग करना पड जाय तो वह भी प्रसन्नतापूर्वक करना चाहिए।"

[जवाहर विचार सार : विविध विपय : २७२]

सुधार चाहते हो या बिगाड़ ?

तुम अपना बंगला साफ रखना चाहते हो पर अगर तुम्हारा शरीर साफ नही हुआ तो बंगले की सफाई से क्या होगा ? तुम आलमारी, मेज आदि फर्नीचर को तो साफ रखो पर शरीर सुधार की ओर तनिक भी ध्यान न दो तो वह सुधार है या बिगाड़ ?

[जवाहर विचार सार : प्रकीर्णक : पृष्ठ २७७]

शास्त्र कदापि नही कहता कि तुम मैले कुचैले रहो और गदगी भरे रखो। वस्तुत गंदगी और मैलेपन ही से रोग फैलते है। यह एक किस्म की हिंसा है।

[सम्यक्त्व पराक्रम (भाग १)]

और लेखनी का ऐक्य आलोकित कर दिखाना है। हम अपना घर साफ करे। नौकरों के भरोसे न रहे। घर मे तो नौकरशाही मत आने दो। अपना काम अपने आप। जो अपनी सहायता खुद नही कर सकता, खुदा भी उसका सहायक नही होता।

गदगी, मानवता के प्रति एक खुला द्रोह है। यह सभ्यता के विनाश का सूचक है।

अहिंसक शुद्धता की व्याख्या :

आचार्य श्री जवाहर कहते हैं—

"वास्तव मे अहिंसा धर्म को ठीक तरह न समझने के कारण ही घर मे गदगी रहती है। जिनके घरों मे आटा, दाल और इसी प्रकार की कोई अन्य खाद्य वस्तु सडी गली पडी रहती है और उसमे जीव जन्तु उत्पन्न होते रहते है। उन लोगो ने अहिसा धर्म के मर्म को समझा नही है।इस कथन मे जरा भी अत्युक्ति नही है। जो लोग अपना ही घर साफ सुथरा नही रख सकते, वे दूसरों के घर की क्या खाक सफाई करेंगे ?

[जवाहर विचार सार . प्रकीर्णक . २७६]

गंदगी के उन्मूलन मे अहिंसा आडी नही आती। गदगी कीटाणुओ की जन्मदात्री है, अतः यह एक खुली

लोक स्वच्छता ही अनुशासन पर्व का अभिप्रेम है।

फैशन—हिंसा

लोक सचार-व्यवहार मे भारत अभी भी साइ-किल-युग मे है। विमान घर-घर नही, मोटरें नही—हेलीपेड और हवाई पट्टिया जनता से दूर हैं। साइकिल उसके हाथ आई है। बैलगाडी से रेलगाडी तक वह पहुचा है।

पर फैशन मे वह आगे है। एक आर्थिक रूप से पिछड़े और पू जी सम्पन्न राष्ट्रो के समूह से बिछुडे हुए भारत के नौजवान और युवतिया पारदेशिक पहिनावे की ओर अघाधु ध भाग उठे हैं। फैशन का भूत सिर [illegible] बोल रहा है। घर मे चाहे खाने को दाने हो न [illegible]ेम साहबनुमा भारतीय मोडलो की वेषभूषा [illegible] अनिवार्य है। फैशनपरस्ती, गरीब मुल्क [illegible] एक खुली मखौल है।

पैसा फैशन-रूढि मे बर्बाद हो, अनर्गल [illegible] हो, व्यर्थ की रगरेलियो मे अप-[illegible]ष्ट्रीय परम्परा और सस्कृति के

तक विज्ञान नही पहुँच सका है। वह मायावरण में रहता है। अत. आप और हम सब न्यूनाशत: छद्मस्थ जीव है।

आचार्य प्रवर ने अपने जीवन काल में अहिंसा-धर्मी जैन समाज की तार्किक तत्त्व विवेचनार्थ प्रतिरोधी शक्तियो के सामने 'सद्धर्ममडन' विषयक ग्रथिका प्रस्तुत की थी।

वस्तुत: सद्धर्ममंडन क्या है ?— सत्य धर्म का अभिमंडन–उसका स्तवन। उसका स्वीकरण। उसका अनुगमन। सत्य-धर्म मानवता का प्रतिहारी होता है। अहिंसा मानवता की अतरात्मा।

जैन धर्म मानवता की अंतरात्मा की आवाज सुने। यह युगापेक्षा है। कारण विश्व व्यापी स्तर पर चारों ओर गंदगी बरस रही है। जीव हिंसा बढ रही है। जलवायु प्रदूषण के मारे आकाश मे पक्षी संवर्ग और धरती पर बसने वाले जीव चराचर का तन, मन, विचार, संस्कार और व्यवहार-आचार अशुद्ध हो गया है।

आवश्यकता है आज एक वीर जवाहर की। एक शुद्ध–बुद्ध–महावीर आत्मोद्‌भव की।

लोक स्वच्छता ही अनुशासन पर्व का अभिप्रेम है।

फैशन—हिसा :

लोक सचार-व्यवहार मे भारत अभी भी साइकिल-युग मे है। विमान घर-घर नही, मोटरें नही–हेलीपेड और हवाई पट्टिया जनता से दूर है। साइकिल उसके हाथ आई है। बैलगाडी से रेलगाडी तक वह पहुचा है।

पर फैशन मे वह आगे है। एक आर्थिक रूप से पिछड़े और पू जी सम्पन्न राष्ट्रो के समूह से बिछुडे हुए भारत के नौजवान और युवतिया पारदेशिक पहिनावे की ओर अंधाधु ध भाग उठे हैं। फैशन का भूत सिर चढकर बोल रहा है। घर मे चाहे खाने को दाने हो न हो, पर मेम साहबनुमा भारतीय मोडलो की वेषभूषा अपटूडेट होनी अनिवार्य है। फैशनपरस्ती, गरीव मुल्क के वाशिन्दो की एक खुली मखौल है।

देश का पैसा फैशन-रूढि मे बर्बाद हो, अनर्गल शिक्षा रूढि मे ध्वस्त हो, व्यर्थ की रगरेलियो मे अपव्ययित हो— यह राष्ट्रीय परम्परा और संस्कृति के विपरीत है।

श्रीमद् जवाहराचार्य ने इस 'फैशनासुर' को खुली आंखो देखकर कहा—

"फैशन मे फँसकर अपने देश की अवनति करना हिंसा मे सम्मिलित है या अहिंसा मे ? आप दया को मानते हैं, दया का नाम लेते हैं लेकिन फैशन की फाँसी लगने से समाज किस तरह नष्ट हो रहा है, इस ओर आपका ध्यान नही जाता। समाज पर आपको दया नही आती। यह दशा देखकर भी अगर आपकी आँखें नही खुलती हैं तो उन्हे खोलने का और क्या उपाय है ?

[जीवनधर्म · कहाँ से कहाँ . पृष्ठ २८३]

कडी मेहनत और दूर दृष्टि का ही जादू इस हिंसा का दमन कर पायेगा अन्यथा फैशन की पट्टी आँखो से नहीं हटेगी।

३

समाज-क्रान्ति

प्रकृति की प्रकृति :

प्रत्येक राष्ट्र अपना व्यक्तित्व धारे हुए होता है। उसका बीज होता है व्यक्ति। व्यक्ति की शाश्वत संगति और संगीति का वैश्विक सुर प्रकृति-गर्भ में होता है। जब जब प्रकृति अपने प्राकृत स्वर का विस्फोट करती है तब तब वह अपने उत्स और ओज का विधान प्रगटाती है। प्रकृति की प्रकृति का क्रम है— सृजन, विसर्जन और संक्रमण।

आम तौर पर हम प्रकृति की कृति पर ध्यान नहीं देते। उसकी कृतियां अनन्त हैं। नाना रंग-रूपी ये वनस्पतियां उसका उद्दान करती हैं। शब्द रूपा-स्पर्श सभृता-रूप अनन्ता-रस-चिदानंदा-गंध प्रमत्ता इस लीलामय प्रकृति का रहस्य केवल अक्षर-बीज ही जानता है। हां, प्रकृति का अपना बीजक होता है।

भारतीय नवजागरण के निरन्तन प्रचेता स्वामी विवेकानन्द ने कहा है—

'प्रकृति बेईमान नहीं होती। आपके दान का बदला वह अवश्य चुका देगी। परन्तु आप बदला पाने की इच्छा करेंगे तो दु ख के सिवा कुछ हाथ नही लगेगा। इससे तो राजी-खुशी से दे देना ही अच्छा है। सूर्य, समुद्र का जल सोखता है तो उसी जल से पुन — पृथ्वी को तर भी कर देता है। एक से लेकर दूसरे को और दूसरे से पहले को देना सृष्टि का काम है।'

बहता पानी निर्मला :

संसार में इतिहास का, सस्कृति, धर्म और समाज का सात्विक साधुवाद उन्ही साधु-पुरुषों को प्राप्त हुआ है जिन्होने त्रिकाल-प्रकृति को सहेजा और समझा है। आप किसी भी युगातंरकारी सत अथवा क्रान्तिनायक का चरित्र उठा कर देखिए वह अपने युग की सक्रान्ति बेला मे अवतरता है।

श्रीमद् जवाहराचार्य एक ऐसे ही विभूतिपाद धर्माचार्य हुए है। उन्होने आज से साढे चार दशक पूर्व जो बाते जनता जनार्दन के सामने रखी, समाज के दम्भी वर्ग को जो ज्ञान संयत प्रतिबोध दिया था, उसकी जीवन्तता, उसकी अमृतशीला तेजस्विता और लोकोद्धारक महत्ता आज भी समय मे साक्षीभूत है।

सच पूछिए तो ससार-चक्र क्षणानुक्षण अहर्निश

प्रवर्तित होता रहता है। युग-पुरुष उस चक्र की गति भापते हैं। उनका तप कठिन कलि काल परीषहो मे पलता-फलता है।

साधु और पानी सदा बहते चलते रहने चाहिए। यह समाज जब रूढ़िबद्ध जड धारणाओ को पकड़ कर एक जगह जडीभूत होता है तब—क्रान्ति होती है।

भारतीय इतिहास के मध्यकालीन सतो, सूफियो, सिद्ध ओलियो ने धर्माडम्बर के विरुद्ध एक सास्कृतिक क्रान्ति की थी। उनके 'सबद' अमर हैं।

समाज-क्रान्ति का बीज-मूल

भारत मे अग्रेजी राज की— पूरी कालावधि मे किसी रूढि॰ चुस्त धर्म-सघ-समाज की वेदी से श्रीमद् जवाहराचार्य के समान कोई तपोधनी साधु, समाज नारायण की लोकाराधना के जीवटवान स्वरूप को लेकर उपस्थित हुआ हो, ध्यान मे नही आता। एक वेदाग व्यक्ति, एक बेलाग प्रकृति धनी और नितान्त निस्पृह, निष्पक्ष और निडर आचार्य ही यह कार्य कर सकता है। समाज की परिपाटिया जब लोक मर्यादाओ का अतिक्रमण कर जाती हैं, जब स्वेच्छाचारिता स्वतंत्रता के नाम पर अराजकता के रूप में जन-जन का भाग्य और भविष्य मसोसने लगती है तब क्रान्ति का

बीज-मूल प्रगटता है । अनेक बलिदानी रक्त धाराओ से स्नान कर क्रान्ति की कालिका महारुद्रा सी कई बार विश्व के हर क्षेत्र में अट्टाहसी हँसी हँसी है।

यह भारत का ही सौभाग्य कहिए कि यहाँ आजादी का सघर्ष कतिपय आपवादिक घटनाओ को छोड़ सर्वथा अहिंसक पर शौर्यपूर्ण रूप मे सतत चलता रहा। इस देश की मिट्टी की प्रकृति नर-सहार की नही बल्कि नर-सवार की है। "बडे भाग मानुष तन पावा" की आर्ष मान्यता के धनी इस देश की समाज-क्रान्ति का बीज-मूल युद्ध मे नही बल्कि शाति मे संरक्षित रहता है।

सादा जीवन उच्च विचार .

भारत की अपरिग्रही सस्कृति के सवाहक आचार्य श्रीमद् जवाहर, धर्म सघाधिपति होकर भी खादी पहिनते थे। आचार-क्रान्ति तो यो ही होती है। महात्मा गाधी की खादी और स्वदेशी भावना के लोक प्रचार मे— युग प्रबोधक श्रीमद् जवाहराचार्य ने अधिकाश प्रवचनो मे विलायती कपडों के त्याग की उत्प्रेरणा समाज को दी है।

'जीवन धर्म' ग्रंथ के अध्याय 'कहा से कहा' पृष्ठ २८२ पर खादी के बारे में आचार्य श्री की वाणी महात्मा

स्वतंत्रता का अर्थ बोध ही खो दिया था। हडताल, घेराव, तालाबन्दी तथा चुनी चुनायी जन-सरकारो की गिरावट तक की स्वतंत्रता, हमने और आपने लोगों को भोगते देखी है। यह दौर कहा तक चलता ? देश की आजादी ऐसे में ही तो खतरे मे पडती है। फलत: अनुशासन-पर्व का दिशा बोध—जनता अ गीकारती है।

जनता चाहती क्या है ? जनता परिवर्तन चाहती है। वह स्वतंत्रता चाहती है जीवन जीने की, खाने-पीने की, रहन सहन और भाव भजन की, वाणी–लेखन की– भारत के संविधान ने ये सुविधाएँ उसे दे रखी है। पर स्वतंत्रता की असलियत क्या है ? श्रीमद् जवाहराचार्य की पुण्य वाणी में सुनिए—

"स्वतंत्रता तो सभी चाहते है लेकिन जो लोग आकाश मे स्वैर विहार करने की भाति केवल लम्बे-लम्बे भाषण करना ही जानते हैं वे—परतन्त्रता का जाल कभी नही काट सकते। यह जाल तो जमीन खोदने वाले किसान ही काट सकते है।"

['संवत्सरी' ग्रथाक २७३]

बस यही से गरीब शोषित की बात चालू होती है।

याद रखना

श्रीमद् जवाहर धर्माचार्य होकर भी एक सतोगुणी समाजवादी थे। उनकी आत्मा बहुत दुखती थी गरीबो को देखकर। वे सदैव अपने श्रावको को भीलो, भोइयो, हरिजनो, किसानो तथा श्रमजीवियो के उत्थान के लिए सेवारत होने का प्रतिबोध देते थे। उन्होने जैन व जैनेत्तर समाज के धनाधीशो को अपने प्रवचनो मे जो कटुसत्य उद्वोधित किए हैं, उनकी अप्रतिमता अग्राकित उद्धरण से सिद्ध होती है—

"आप लोगो के पास जो द्रव्य है, उसे अगर परोपकार मे, सार्वजनिक हित मे, दीन–दुखियो को साता पहुँचाने मे नही लगाया गया तो याद रखना इसका ब्याज चुकाना भी तुम्हे कठिन हो जाएगा।"

[दिव्यजीवन—४६]

वित्तेणताणं न लभे पमत्ते .

समाज का धन तस्करी, चोरबाजारी और हरामखोरी से एकत्र करने वाले— दो नम्बर के पैसे से सेठो का बचाव धन दौलत से नही हो सकता। यह शास्त्र वचन है।

दिल से हराम को निकालो

लोग अपनी-अपनी जातियो मे सुधार के लिए

कानून बनाते हैं, जातीय सभाओं में प्रस्ताव पास करते है, लेकिन जब तक हृदय मे हराम आराम से बैठा है तब तक उनसे क्या होना जाना है ?

[जीवन धर्म · कहा से कहां : २८६]

सच्चा व्यवहारी कौन ?

यह विश्व विदित है कि भारतीय किसान ससार का सबसे अधिक मेहनती व्यक्ति है। जितनी प्राकृतिक आपदाये और निराशाये भारतीय किसान को उठानी पडती है, उतनी ससार मे किसी किसान जनता को नही।

भारत का किसान दयालुता, मानवता और अतिथि सेवा-परम्परा तथा लोक सास्कृतिकता का परम रक्षक और लोक धर्म का सात्विक सरक्षक सिद्ध हुआ है। वह निरक्षर होकर भी भारत की लोक नेत्री प्रधान-मंत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी के शब्दो मे अशिष्ट नही है, शालीन है, सुसस्कृत है। उसे कर्जदार बनाया इस समाज ने। उसे गरीब बनाए रखा यहाँ के शोषक सत्ता पतियों व एकान्त सुखोपभोगी धनाधीशो ने। इन्हे उठने नही दिया तो धर्म के नाम पर दूकाने चलाने वालो ने।

भारतीय किसान सद्व्यवहारी है, सदाचारी है।

श्रीमद् जवाहराचार्य स्वय एक ऐसे गाव (थादला-मालवा मे) मे जन्मे थे जहा की लोक दरिद्रता को किशोर गृहस्थी— श्री जवाहर लाल ने अपनी आखो से देखा था।

आचार्य प्रवर कहते हैं— "गरीब किसान उतना असत्यमय व्यवहार नही करता जितना साहूकार कहलाने वाले सेठ करते है। किसी किसान ने स्वार्थ से प्रेरित होकर किसी को डुबोया हो ऐसा आज तक नही सुना गया। किन्तु बडे व्यापार करने वाले सैकडो लोगो ने लोभवश दीवाला निकाल दिया और कइयो के पैसे हजम कर बैठे।

[दिव्य सन्देश - अल्पारभ-महारभ : २१०]

स्वतंत्रता बनाम दौलत .

इस देश मे पराधीनता का जो लम्बा काल चला उससे सबसे बडी हानि समाज की यह हुई कि धन, ज्ञान तथा सत्ता का जबरदस्त केन्द्रीकरण मुट्ठी भर धनपतियो, पुरोहितो और निरकुश शासको के हाथो मे हो गया।

आम जनता इस तिहरे केन्द्रीकरण के जाल मे, अभावभोगी, आतककारी तथा कदाचारी परिस्थितियो से विवश होकर दिनोदिन रसातल को चली जाती रही।

उनको मागने के लिए कहा जाय तो वे स्वतन्त्रता के बजाय धन मागना पसन्द करेंगे। यह गुलामी की निशानी है।

[राजकोट व्याख्यान पृष्ठ २६०]

पूज्यपाद श्रीमद् जवाहराचार्य के उक्त लोक साहसिक कथन के गर्भ से एक प्रश्न मेरे मस्तिष्क मे उठ रहा है।

क्या हम स्वतन्त्रता के अधिकारी हैं ?

मेरी बात से भले कुछ लोग असहमत हो पर सत्य तो सत्य है, इसे कहना ही होगा। सत्य यह है कि— हम भारतीयो को सोने के गहने प्यारे लगते हैं। हमे दौलत जोडना और हवेलिया खडी करने की लालसा रहती है। हमारे आलीशान बगलो के सहारे कई-कई दिन भूख से बिलबिलाते—गरीब मा-बापो की आँखें पैसे-पैसे की भीख हेतु बरस बरस जाती हैं, उनके दूध मुँहे बच्चे भूख के मारे करुण क्रन्दन कर आधीरात की खामोशी को तोड उठते हैं—हम है इतने क्रूर कि डटकर खाना खाते हैं, जमकर पीते पिलाते हैं, नाच सिनेमा और केबरे पार्टिया और गोठो का सुख लूटते हैं। हम— मुट्ठी भर धनपति, हम धनपति-दलाल। हम दम्भी मध्यमवर्गीय बाबूजात लोग। क्या हम स्वतन्त्रता के अधिकारी हैं ?

उनको मागने के लिए कहा जाय तो वे स्वतन्त्रता के बजाय धन मागना पसन्द करेंगे। यह गुलामी की निशानी है।

[राजकोट व्याख्यान पृष्ठ २६०]

पूज्यपाद श्रीमद् जवाहराचार्य के उक्त लोक साहसिक कथन के गर्भ से एक प्रश्न मेरे मस्तिष्क मे उठ रहा है।

क्या हम स्वतत्रता के अधिकारी हैं ?

मेरी बात से भले कुछ लोग असहमत हो पर सत्य तो सत्य है, इसे कहना ही होगा। सत्य यह है कि— हम भारतीयो को सोने के गहने प्यारे लगते हैं। हमे दौलत जोडना और हवेलिया खडी करने की लालसा रहती है। हमारे आलीशान बगलो के सहारे कई-कई दिन भूख से बिलबिलाते—गरीब मा-बापो की आँखें पैसे-पैसे की भीख हेतु बरस बरस जाती हैं, उनके दूध मु हे बच्चे भूख के मारे करुण क्रन्दन कर आधीरात की खामोशी को तोड उठते हैं—हम हैं इतने क्रूर कि डटकर खाना खाते हैं, जमकर पीते पिलाते है, नाच सिनेमा और केबरे पार्टिया और गोठो का सुख लूटते हैं। हम— मुट्ठी भर धनपति, हम धनपति-दलाल। हम दम्भी मध्यमवर्गीय बाबूजात लोग। क्या हम स्वतन्त्रता के अधिकारी हैं ?

क्या हम लोकतंत्री है ? क्या हम समाजवादी हैं ? क्या हम देश-द्रोही नही ?

हम निर्णय के द्वार पर खड़े हैं !

क्रान्ति एक सतत प्रक्रिया है। यह एक लोक प्राकृतिक क्रिया है। इसके सामने जो पडेगा— पिस जाएगा। गरीबो का है समाजवाद। मजदूरो का है लोकतंत्र। यह धर्म निरपेक्ष गणराज्य है किसके लिए ? धर्म भीरुग्रो के लिए नही। जिन शासन परम्परा के वीरधर्मियो के लिए।

स्वतत्रता का संघर्ष जारी है। स्वावलम्बन की यात्रा तय हम करके रहेगे। दौलत है किसान-मजदूर की मेहनत। पूंजी तो साधन है, साध्य नही, परिग्रही ग्राराध्य नहीं। यह है ग्राज के राष्ट्र का ग्राशामत्र। ग्रनुशासन पर्व का यही लोक-गुरुत्वाकर्षण है।

श्रीमद् जवाहराचार्य का स्वप्न साकार यह देश कर रहा है। हमे दौलत से चिपके रहना है या स्वतत्रता के बलि पथ पर ग्रागे बढना है ? हम निर्णय के द्वार पर खड़े है। समय—उत्तर माग रहा है।

कह रही है ग्राचार्य प्रवर की—युगवाणी—

परिवर्तन ग्राएगा :

"परिवर्तन चाहे किसी को इष्ट हो या ग्रनिष्ट

हो, शुभ हो या अशुभ हो—वह होता ही है। ससार की कोई शक्ति उसे रोक नही सकती। सच तो यह है कि परिवर्तन मे ही गति है, प्रगति है, विकास है, सिद्धि है।"

[सवत्सरी ३२७]

भयंकर क्रान्ति होगी :

"आजकल बहुत से लोग श्रीमन्ताई के ढोग मे पडकर गरीबो की ओर आखें बद कर बैठे हैं। उन्हे यह याद रखना चाहिए कि समाज की यह विषमता एक दिन असत्य हो जाएगी और तब भयकर क्रान्ति होगी!

[जवाहर विचार सार : १०३]

अनुशासन-पर्व

णमो धम्म सघस्स

व्यष्टि-कल्याण से अधिक पुण्यकारी समष्टि-धर्म है।

जनाचार्यों ने सघ को पूज्य माना है। संघ याने लोक शक्ति। लोक शक्ति को धर्म-माता का वहुमान प्रदान किया जाय तो धार्मिक लोकतत्र की शोभा वढती है और आचार्यानुशासन समादृत होता है।

कलियुग या कहिए कल-युग मे शक्ति का वास सघ मे ही रहेगा, यह आज, कल और परसों का सत्य है यह नानृत नही। सन्मार्ग प्रवर्त्तक आचार्य विवेकवान होते हैं। वे न तो अधविश्वास मे पडते हैं और न ही वे चाहते हैं कि श्रमण-संस्कृति कूप मडूक हो।

आचार्य की सिंह-दृष्टि सव देखती है। अत उसे लोक-द्रष्टा कहा गया है। लोक-द्रष्टा की भूमिका मात्र

दर्शक की नही वरन् दृश्यमान जगत् के सयमन एव अनुशीलन हेतु स्त्रष्टापदीप की होती है ।

लोकजीवो को निरन्तर ज्ञानाभिमुख प्रतिश्रुत रखना आचार्यानुशासन का गहन दायित्व है । वह सघ-विग्रह के वक्त एकान्तिक योग साधना का नाम लेकर—अपने को तटस्थ नही रख सकता । भद्रबाहु स्वामी ने इस तत्त्व को जिस गहराई से ग्रहण किया था, वह क्षमा-वीर की सर्वोच्च भूमिका थी ।

जवाहर-योग

श्रीमद् जवाहाराचार्य लोकयोगी थे । उनके समय मे श्रमण-परम्परा मे कम विग्रह नही था । उन्होने एक —साहसिक धर्मनायक के नाते सघ-श्रमणो को अपनी ज्ञानगम्य और अनुभव सिद्ध वाणी से जो प्रतिबोध प्रदान किए हैं, उन सबका समाजशास्त्रीय दृष्टि से साहित्य-समालोचनात्मक अनुशीलन करने से एक ही तत्त्व पकड मे आता है, वह है—जवाहर योग ।

हर युग-प्रधान की अपनी शैली होती है । पूज्य-पाद श्री जवाहराचार्य की शैली थी बीकानेरी मिश्री के कु जे सी । मिश्री कडक भी ; मिश्री मधुर भी । माँ प्यार भी करती है और बच्चे को ताडती भी है ।

आचार्य प्रवर की श्रावकों के प्रति जो ताडना है, उसमे लताडना—भाव नही लगता । उनकी ताड़ना श्रावको को खूब ताड़ लेती है तब उन्हें खरी-खरी बातें कही जाती हैं।

यह है जवाहर-योग का लोककल्प ।

जवाहर-साहित्य के एक विनम्र अध्येता के नाते मैं यह सविनय लिखू कि ऐसा समन्वयवादी, धीरप्रशान्त और ध्यानावस्थित तद्व्रतेनमनसा-धनी आचार्य पूरी भारतीय धर्माचार्य परम्परा मे कम ही देखने मे आया है, तो अतिशयोक्ति नही होगी ।

'गीता' मे देवी सम्पद् के २६ गुण बताए गए है। उनमें एक गुण है—'योग व्यवस्थिति' । श्रीमद् जवाहराचार्य के जवाहर-योग का यह सार है ।

संघ प्रतिबोध के युगस्वर

श्रमण-सस्कृति के अनुपम-अनुशास्ता श्रीमद् जवाहाराचार्य ने अपने जीवनकाल मे दो ही बातो पर ज्यादा जोर दिया। श्रमणो मे सौजन्य और सौम्य सवर्द्धन और हर हालत मे सघ-एकता का दृढीकरण— इन दोनो मे इस आलेख मे हमारा प्रतिपाद्य विषय आचार्य श्री का सघ को दिया गया युग-प्रतिबोध है।

सार सार को गहना है अन्यथा कोरे के कोरे रहना है। आचार्यों के आप्तवचन दिशा-दीपवत् हमारे सम्मुख हैं।

समाज मे कीर्ति लुब्ध लोग सदा होते आए हैं। उनको आचार्य प्रवर ताडते हैं—

अभी मोह ग्रंथि नहीं खुली !

"अगर आप समाज मे प्रतिष्ठा पाने के उद्देश्य से सामायिक करते हैं, कीर्ति के लिए उपवास करते है और सम्मान पाने के लिए भक्ति करते हैं तो समझ लीजिए कि अभी मोह की ग्रन्थि नही खुली है।"

[बीकानेर के व्याख्यान २५३]

मोह की गाठ, सासारिको से सहज ही मे छूट जाय तो कहना ही क्या ! आज तो पूरा युग, पूरी पीढी, पूरा लोक, प्रचार कामी हो गया है।

लोग सूई का दान भी करते है और स्वर्ग विमान की ओर आँखे गडाते है। दान देकर नामयश-कामी लोगो को आचार्य प्रवर कहते है—

"दान के साथ अगर अभिमान आ गया तो—

धर्म और भ्रम

"जैसे खान मे सोने के साथ—मिट्टी मिली रहती है, वैसे ही धर्म के साथ लोक भ्रम मिला रहता है।"

[धर्म और धर्मनायक १५५]

संघ-स्वरूप

"सघ शरीर के समान है। साधु उसके मस्तक हैं, साध्विया भुजायें, श्रावक उदर के स्थान पर हैं और श्राविकायें जघा हैं। मस्तक मे ज्ञान हो, भुजा मे बल हो, पेट मे पाचन शक्ति हो, जघा मे गतिशीलता हो तो अभ्युदय मे क्या कसर रह जाएगी।

['सवत्सरी' १४८]

प्राणोत्सर्ग · संघ हेतु

"सघ-शरीर के सगठन के लिए सर्वस्व का त्याग करना भी कोई बडी बात नही है। सघ के सगठन के लिए अपने प्राणोत्सर्ग मे पीछे पैर नही रखना चाहिए। सघ इतना महान् है कि उसके सगठन हेतु आवश्यकता पडने पर पद और मोह न रखते हुए इन सबका—त्याग कर देना श्रेयस्कर है।"

[सवत्सरी : १४७]

ये बड़े

"बडो के बडप्पन तो सौ गुनाह माफ समझे जाते है परन्तु मैं कहता हूँ कि संसार में अधिक दोष बडे कहलाने वालो ने ही फैलाये हैं।"

[सवत्सरी ३३३]

उक्त उद्धरणों का प्रस्तुतीकरण इस दृष्टि से किया गया है ताकि श्रीमद् जवाहराचार्य की सामाजिक दृष्टि का वैशिष्ट्य व वैविध्य पाठको के समक्ष एक ज्ञान-प्रवाह के रूप मे प्रसरित हो।

धर्म सचेतना

पूज्य प्रवर श्रीमद् जवाहराचार्य विनयावतार थे। साधु आत्मालोचक होता है। वह अपने मे झाक कर ससार की ओर अपनी आँखे खोलता है। जो बोलता है उसको पहले वाणी तुला पर तोलता है। विद्वान् सब जगह पूजे तो जाते है पर सब जगह पाए नही जाते।

युगस्वामी श्रीमद् जवाहर जैन धर्म को पुरुषार्थियो का धर्म मानते थे। व्यक्तित्व का परिदर्शन उसकी कृति प्रस्तुत करती है। युग सत विनोबा ने ठीक कहा है कि --

"भक्ति मे कृति और कृति मे भक्ति का समावेश होता है।"

युग व्यक्तित्व के पारखी श्रीमद् जवाहाराचार्य ने अपने समय की रूढिग्रस्त जनता को अपनी देशना से सम्यक् धर्मसचेतना की ओर अभिमुख ही नही किया बल्कि उनमे एक राष्ट्रीय नागरिक भावना का उन्मेष भी जागृत किया।

परमात्मा से प्रार्थना

सतो को सीकरी से क्या लेना देना ? उन्हे न राजपाट चाहिए न लौकिक ठाठ-बाठ। वे तो लोक-कल्याण के मूर्तिमत परोपकारी सत्पुरुष होते है।

विश्व प्रसिद्ध गीतोक्त चारो वर्णों की चर्चा-परिचर्चा युग कर चुका। टीका-पोथे लिखे जा चुके। पर एक ही वर्ण बचने वाला है, वह है 'हसवर्ण'। हस वृत्ति वाले परमहस वीतराग साधुओ से ससार क्या छीनेगा ? वे तो समाज को खरी-खरी सुनायेंगे। हस से यदि कोई मान सरोवर छीन ले तो छीन ले पर उससे नीर-क्षीर विवेक शक्ति का अपहरण तो वह नही कर सकता। श्रीमद् जवाहराचार्य का एक विनयावनत आत्मलोचन उन्ही की वाणी मे आज के समाज की आँखे खोल देने के लिए पर्याप्त है—

"मोती बीनने वाला कभी-कभी फिसल जाता है।

मै चाहता हूँ कि सद्गुण रूपी मोती वीनते समय मैं कभी फिसल न जाऊ। अपने पुरुपार्थ के द्वारा गुण रूपी मोतियो को ही ग्रहण करता रहूँ। परमात्मा से यही मेरी प्रार्थना है कि मेरी यह भावनापूर्ण हो।

[जामनगर के व्याख्यान . १६५]

यह है अनुशासन-पर्व का लोक आदर्श! आदमी चूक सकता है, पर उसे सावधान रहना चाहिए। उसे कुछ छिपाना नही चाहिए। राष्ट्र से सम्पत्ति छिपाना और लोक से ज्ञान छिपाना दोनों ही अपराध हैं। जो है, समाज का है, सघ का है।

रोटी तरण मजूर

लोगो ने धर्म को व्यवसाय बना लिया है। इसी व्यावसायिकता के कारण धर्म के प्रति लोक मे श्रद्धा पक्ष निर्बल पड़ा है। वस्तुत· ये छद्म व्यवसायी धार्मिक होते ही नही, वे तो आडम्बरी होते हैं, प्रपंची-प्रमत्तवान और अहकारी होते है, साधु-साधक नही होते। आचार्य प्रवर के युग मे 'लाडू खाणे पच' भी थे समाज मे तो धर्म सम्प्रदायो मे 'जीभ चटोरे बाबा' भी खूब थे। आज भी है, इनके नवीनतम संस्करण! श्रीमद् जवाहाराचार्य प्राय· एक दोहा बोला करते थे—

'धनवंत को आदर करे, निर्धन को करे दूर
ते साधू जाणो मती, रोटी तणा मजूर'
[जामनगर व्याख्यान, १३८]

रोटी-धर्म और चोटी-धर्म का—चक्कर भव-भव का है। स्वामी विवेकानन्द जैसे—विश्वयोगी ने 'गीता' की पोथी पढने की बजाय नई पीढी को फुटबाल खेलने की सलाह क्यो दी थी ? गाँधीजी की रामधुन के साथ चर्खा चलता हो था कि नही ? तात्पर्य यही है कि काम भी करें और नाम भी जपें-वरे। पर इस नाम जपाई का प्रदर्शन सरे आम क्यो ?

धर्म तो अपनी रक्षा आप कर लेता है और प्राणियो की रक्षा करने को भी वह समर्थ है। समाज को अनुशासन की लीक से हटते देखते ही आचार्य सघ-भक्तो को बचाते आए हैं। आँखो देखते ही कोई खड्डे मे गिरे, उसको कौन बचाए ? ये रोटी-मजूर कथित धर्म-पतित तो खुद भी डूबते हैं और अपने भवर जाल मे फसे प्राणियो को भी ले डूबते है।

उपभोक्ता श्रावको का हित-चिंतन

यह तो नही कि धर्म विशेष के श्रावको के अलग पेट होते हैं और मोक्ष के अलग गेट। रास्ता तो एक ही

है कल्याण का भाई ! भूख तो देहधारी को लगती ही है।

अनुशासन-पर्व की बात का युग-सन्दर्भ प्रस्तुत कर पूज्य प्रवर के प्रवचनो व प्रतिबोधो की समसामयिकता का हम मूल्यांकन करे तो हमे गर्व होता है कि युगाचार्य श्रीमद् जवाहरलालजी म. सा का अर्थतत्रीय लोकज्ञान भी पारदर्शी था। उन्हे यह कल्पना आज से दशकों पूर्व हो गई थी कि आने वाले समय मे व्यावसायिक लोगो, शोषक धनिको और एकाधिकारवादी व्यापारियो के हाथो आम आदमी—नागरिक-उपभोक्ता की बुरी तरह लूट मचेगी। आज का नागरिक बाजार मे सरे आम लुटता है। किसलिए? कि वह असगठित है। इसलिए कि सही पैमाने और ढाचे के उपभोक्ता क्रय-विक्रय वस्तु भडार समुचित रूप मे नही खुले हुए हैं। सरकार ने इस दिशा मे काफी कदम उठाए हैं पर अभी उपभोक्ता का सुख-सौभाग्य उससे दूर है।

श्रीमद् जवाहराचार्यजी म. सा. ने सन् १९३० मे बीकानेर चातुर्मास के दौरान इन असुरक्षित उपभोक्ताओ की परिकल्पना कर कहा है—

"आज मुनाफा न लेने वाली या मर्यादित मुनाफा लेने वाली दुकान कही हो तो उससे जनता को वडी

जबरदस्त शिक्षा मिल सकती है।"

[भक्तामर व्याख्यान २०८]

विज्ञ पाठक वृन्द ! महाराज श्री के युग-दूरान्वेषी विचार की तह मे जाइएगा तो ! आप और हम उपभोक्ता कहाँ खडे हैं जरा देखें तो इर्द गिर्द ।।

राष्ट्रधर्मिता की ओर

आज राष्ट्र धर्म चाहिए भारत को। राष्ट्र धर्म का क्या प्रारूप-स्वरूप हो ? कैसे भारतीय जनता को आध्यात्मिक और सास्कृतिक स्वराज्य उपलब्ध हो सकता है ? अनुशासन-पर्व संदर्भित राज-घोषित और समाज-पोषित राष्ट्रीय आर्थिक कार्यक्रम से आगे हमारे लोक लक्ष्य क्या है ? हम कैसा भारत चाहते हैं ? हम आज क्या हैं ? कहाँ हैं ? कैसे हैं ? इन सब प्रश्नो का समाधान हमे ढूढना है। राजनेता और अर्थशास्त्री तो राष्ट्रीय स्वावलम्बन हेतु चिन्तित हैं ही पर केवल उन्ही के बूते पर हमे हाथ पर हाथ धरे नही बैठे रहना है।

सत्य कहा ही जाय—तो कहना होगा कि इस देश का 'स्वधर्म' उजागरित होना शेष है। धर्म कई हैं पर राष्ट्रधर्मिता नही है। सघ हैं पर संगनियां-संहितिया नही हैं। मत हैं पर एकता नही है। मौडे हैं पर नैतिक

नेतृत्व नही है। वाक् शूर गली-गली मे मिल जायेंगे पर कर्मवीर गाँधी उनमे नही है। लोक स्वच्छता सेवक सेनापति बापर दम्पतियो का अभाव है, अकाल है। फिर देश बढेगा कैसे ? हम घर की सफाई के लिए झाड़ू छूना ही नही चाहते। गली की गदी नाली मे अटके कचरे को लकडी से नाली के किनारे करने के काम को 'भगी कर्म' समझते हैं। 'भगी' को हमने अभी भी मन से स्पश्र्य नही मान रखा है।

हम द्वैताचारी है। हम मुखौटाधारी है। हम वो है ही नही जिनके बूते पर कोई राष्ट्रधर्मिता पल्लवित, पुष्पित और प्रस्फुटित हो सके।

प्रकाश बोलता है

राष्ट्रधर्म, लोक नैतिक राष्ट्रीयता के लिए आवश्यक है। मेरे दिवगत अग्रज बधु कवि श्री रामनाथ व्यास 'परिकर' ने अपनी विश्व यात्रा के सस्मरणो का सार एक कथन मे मुझे प्रगटाया "दुनिया के कुछेक सम्पन्न राष्ट्रो को छोड कही पर भी वहाँ के नागरिक अपने देश का मान धन से नही तोलते-मोलते। उन्हे अपनी कला, साहित्य और सस्कृति पर गर्व होता है। वे अपने शहीदो, योद्धाओ और कवियो तथा नाटककारो

राष्ट्र धर्म का विचार-सूत्र

श्रीमद् जवाहराचार्य ने 'राष्ट्र धर्म' की हमे परि-कल्पना दी है। आचार्य श्री फरमाते है—

"जिस कार्य से राष्ट्र सुव्यवस्थित होता है, राष्ट्र की उन्नति, प्रगति होती है, मानव समाज अपने धर्म का ठीक-ठीक पालन करना सीखता है, राष्ट्र की सपत्ति का सरक्षण होता है, सुख-शाति का प्रसार होता है, प्रजा सुखी बनती है, राष्ट्र की प्रतिष्ठा बढती है और अत्या-चारी राष्ट्र, स्वराष्ट्र के किसी भाग पर अत्याचार नही कर सकता—वह कार्य राष्ट्र-धर्म कहलाता है।

[जवाहर विचार सार : धर्म विचार . ८२]

आज देश को बाह्याभ्यान्तरिक खतरो के बीच सावधान रहना है। दशको-पूर्व एक साधुमना राष्ट्रसत अपने देश के धर्म पर अपनी बात समाज के समक्ष रखता है—उसका दूरदर्शन कमाल का ही कहा जाएगा कि वह स्वराष्ट्र पर अत्याचारी राष्ट्र के अतिक्रमण की सभा-वना मात्र से आक्रोशित हो उठता है।

एक आचार्य एक राष्ट्रसत, एक युगप्रधान की अतरात्मा कल चिंतित हुई इस देश के लिए। उसकी चिता मिटी कहाँ ? उसका दर्द हल्काया कहाँ ? उसका चिन्तन जीवित है—जीवन्त है।

इस राष्ट्र की आत्मा अमर है। हम भले सदियो से चूकते आए हैं पर गाँधी और विवेकानन्द, कबीर, टैगोर, वल्लतोल, प्रताप और शिवा जैसे विश्वव्यक्तित्व हमारी ही धरती जन्माती है। सूर-तुलसी और मीराँ—अरडाल और लल्लेश्वरी के गीत हम नही भूले है। हमे साम्राज्यवादी ताकतो ने अतीत मे लूटा है। अब यह लूट नही चलेगी। हम एक राष्ट्र बन रहे हैं।

ज्ञान मिलेगा—श्रद्धावान को

गीता कहती है—श्रद्धावान को ही ज्ञान लभता है। एक पुराकवि ने भी अपनी काव्य पक्तियो मे श्रद्धा को श्री-पद दिया है—धर्म बोध का तत्त्व पद प्रस्तुत है—

सद्धं नगर किच्चा, तव सवर म माल।
खति मिउरणापगार, तिगुत्त दुप्प घसय ।।
धणुं परक्कम किच्चा, जीव च इरिय सया।
धिइच केयरण किच्चा, सच्चेण पति मथए ।।
तव नाराप जुत्तेण, भित्तेण कम्म कुचय।
मरणी विगप सगायो, भवाओ परि मुच्चई ।।

[श्रद्धा (सत्य पर अटल विश्वास) रूपी नगर, तप एव सवर (सयम) रूपी अर्गला, क्षमारूपी बढिया गढ—तीन गुप्ति (मन-वचन-काया नियमन) रूपी—

शतघ्नी तोप, पुरुषार्थरूपी धनुष, ईर्या (विवेकरूपी प्रमाण) रूपी डोरी, ज्या और धैर्य रूपी ध्वजा बनाकर सत्य के द्वारा कर्म शत्रुओं का नाश करना चाहिए।

[जवाहर विचार सार पृष्ठ २६०]

आचार्य प्रवर श्रावको का मनोबल बढाने में सिद्धहस्त थे। विवेकानन्द और रामतीर्थ की सी फडकती उद्‌बोधन शैली का सा नैसर्गिक आनन्द पाठको के समक्ष एक कथन-वचन के माध्यम से प्रस्तुत है—

"ए मानव! कायरता छोड़ दे। अपने पर भरोसा रख। तू सब कुछ है। दूसरा कुछ नही है। तेरी क्षमता अगाध है। तेरी शक्ति असीम है। तू समर्थ है। तू विधाता है। तू ब्रह्मा है। तू शकर है। तू महावीर है। तू बुद्ध है।

[दिव्य सन्देश . सत्याग्रह १६७]

"पगड़ी नहीं छोड़ते लोग......"

समाज सुधरते-सुधरते सुधरेगा। सुधार की प्रक्रिया धीमी होती है। खून खराबा करके—रक्त पूर्ण क्रान्ति लाने वाले राष्ट्रो को बनने मे काफी समय लगा है। भौगोलिक सीमाओ मे हमारा राष्ट्र बहुत विराट है। छोटे-छोटे देश सम्पन्न हुए हैं तो एक ही कारण से—उन्हे प्राकृतिक सम्पदा ने निहाल कर दिया। जितने हाथ

खाने मे लगे उससे दूने यदि राष्ट्रीय उत्पादन मे जुटें तो हमारा देश भी शीघ्र तरक्की कर सकता है। हमे गर्व है कि देश को हवा बदल रही है।

पर जहाँ आधे से अधिक राष्ट्र की जनसख्या आज भी निरक्षर और क्षुधाग्रस्त है। उसमे पगडी-धोती की झूठी आन-मान की टटेबाजी भी अभी चल रही है। जबभी श्रीमद् जवाहाराचार्य कोई करारी—खारी बात समाज को प्रस्तुत करते थे, उसका प्रतिपाद्य विषय गहन होता था। 'पाच व्रतो' पर चर्चा करते हुए आप फरमाते हैं—

"लोगो ने अहिसा का अर्थ जीव न मारना, इतना ही समझ लिया है। लोग दया भी सूक्ष्म जीवो की ही करके अहिसावादी बनना चाहते हैं, क्योकि इसमे कुछ करना घरना नही पडता। भाई-भाई आपस मे कट मरेंगे पर स्थावर जीवो की दया मे वे आगे रहेगे। भाई को मारने, उसका नाश करने, उसे हानि पहुँचाने और उसका हक छीनने को तैयार रहते हैं, फिर भो कहते हैं, "मैं महीने मे ६ दया पालता हू।" क्या यही दया का स्वरूप है? आज हाल तो यह हो रहा है कि पगडी तो छोडते नही और धोती छोडने को लोग तैयार हो जाते है।"

[जवाहर विचार सार ६२]

एक टीसता सवाल !

पूज्यवाद श्रीमद् जवाहराचार्य की आत्मा को अछूतो और विधवाओ की सामाजिक दुर्दशा से आजीवन पीडा बनी रही। आज अछूतोद्धार के लिए पूरा राष्ट्र नए आर्थिक कार्यक्रम की कर्मवेदी पर सन्नद्ध खड़ा है। अछूतों, दलितों, पतितो का तारण तो इस देश मे हो जाएगा। पर एक टीसता-सा सवाल समूचे भारतीय समाज के समक्ष प्रस्तुत है—'हमारी विधवा माताओं, बहिन, बेटी-बहुओ तथा अनाथ ललनाओं के प्रति सामाजिक अत्याचार का खात्मा कब होगा ?

जब तक इस देश की नारी रोती रहेगी, उसकी आत्मा कलपती रहेगी तब तक हम सिर ऊँचा उठाकर नही चल सकेंगे। जवाहर शताब्दि वर्ष पर यह आग्नेय प्रश्न हम श्रीमद् जवाहर वाणी मे ही प्रस्तुत करना अपना सृजन-धर्म समझते हैं—

"विधवा बहिनो की दशा पर जब मै विचार करता हूँ तब मेरी आँखो मे आंसू आ जाते है........याद रखना इन विधवाओ के हृदय से निकली हुई आहे वृथा नहीं जायेगी। समय आने पर वे ऐसा भयकर रूप धारण करेगी कि भारत को भस्मीभूत कर डालेगी। आप पशुओ पर दया करते है, छोटे-छोटे जतुओ पर

करुणा की चर्चा करते हैं, पर इन विधवा बहिनों की तरफ ध्यान नही देते। क्या इनका जीवन सूक्ष्म कीट-पतगो और पशु-पक्षियो से भी गया बीता है?"

[दिव्य सदेश . रक्षा बंधन : ४४]

सवाल अगारवत् है। पूज्यपाद की चेतावनी रोगटे खडे कर देने वाली है। विधवायें अत्याचार से मुक्त हो। उन्हे समाज पांवो पर खडा करे—यह कामना है।

दिव्य शांति का उदय

जीवन भर जिस महाप्राण मुनि ने समाज को ज्ञानालोकित किया, समाज को अपना सर्वस्व देकर जो पडितमरणधर्मी हुए। उनकी वाणी [illegible] में सदा गूजती रहेगी। उन्होंने अपने महाप्रयाण से पूर्व जो दिव्यवाणी घोषित की, उसका प्रत्येक अक्षर समाज-सचेतना का प्रतीक है—

"जो तुम्हारा है, वह तुम्हें कभी भिन्न नहीं हो सकता। जो वस्तु तुमसे भिन्न हो जाती या हो सकती है, वह तुम्हारी नही है। पर पदार्थों में आत्मीयता का भाव स्थापित करना महान् भ्रम है। इस भ्रमपूर्ण आत्मीयता के कारण जगत् अनेक कष्टों से पीड़ित है। अगर 'मैं' और 'मेरी' की मिथ्या धारणा मिट जाय तो जीवन में एक प्रकार की अलौकिक मधुरता, निश्चल निस्पृहता और

दिव्य शांति का उदय हो जाय।'

[पूज्य श्री जवाहरलाल की जीवनी : ३११]

आत्म दीपो भव

दिव्य शांति का उदय हो रहा है। समाज सचेतित है। राष्ट्र विकास हेतु उत्प्रेरित है। पूज्यपाद के शुभ सकल्प, उनकी सामाजिक दिव्यदृष्टि, उनका युग मनोरथ, यह राष्ट्र साभार साकार करेगा। हाँ, हमे प्रकाश की खोज में बाहर कही नही भटकना है। पूज्य-प्रकाश हृदय मे है। आत्मा के ज्योतिर्मडल से हमे आलोकित होकर समाज के पिछड़े वर्गो को ऊपर उठाना है। दरिद्रनारायण नही, हमाराआराध्य है विकासवान महान् लोकशील-व्रती समाज—नारायण।

'सुखा संघस्स साभग्गी समग्गान तपो सुखो।'

—सुत्तनिपात

....

परिशिष्ट—१

वीर संघ योजना

धर्मप्रधान भारत के आध्यात्मिक आकाश के प्रकाश-स्तभ, युगद्रष्टा, युगस्रष्टा, युग प्रवर्तक, ज्योतिर्धर जैनाचार्य स्व श्री जवाहरलालजी म. सा ने अपनी उद्‌बोधक प्रवचन शृ खलाओ मे सद्‌गुणो के प्रचार-प्रसार एव सयम साधना के निखार हेतु एक महान् योजना प्रस्तुत की थी। भगवान् महावीर के साधना-मार्ग को प्रशस्त बनाने वाली इस जीवनोन्नायक मध्यम-मार्गीय साधनायुक्त प्रचार-योजना का वीर-निर्वाण के ऐतिहासिक वर्ष मे 'वीर सघ योजना' के नाम से क्रियान्वयन प्रारम्भ कर दिया गया है।

'वीर सघ योजना' इन चार आधारभूत स्तभो पर आधारित है—१ निवृत्ति, २. स्वाध्याय, ३ साधना और ४ सेवा।

साधना के स्तर पर वीर सघ के सदस्यो की तीन श्रेणिया हैं—

१—उपासक सदस्य

उपासक सदस्य अपने परिवार एव व्यवसाय से

आंशिक निवृत्ति लेकर प्रतिदिन सामायिकपूर्वक स्वाध्याय एवं व्रत प्रत्याख्यानपूर्वक साधना करते हुए निष्काम भाव से सेवारत होने का निरन्तर अभ्यास करेंगे।

२–साधक सदस्य

साधक सदस्य उपासक सदस्यो से साधना के क्षेत्र में विशिष्ट होगे। वे पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे और पारिवारिक तथा व्यावहारिक उत्तरदायित्वो से पूर्ण निवृत्त न हो पाने के कारण आंशिक निवृत्ति के साथ ही स्वाध्याय तथा सेवा के क्षेत्र में भी उपासक सदस्यों से अधिक समय देंगे।

३–मुमुक्षु सदस्य

मुमुक्षु सदस्य परम पूज्य श्री जवाहराचार्य जी म. सा. के मूल स्वप्न को साकार बनाने वाले गृहस्थ एव साधुवर्ग के बीच की कडी होगे। वे एक प्रकार से तीसरे आश्रम—वानप्रस्थ के तुल्य साधना युक्त जीवन के साथ धर्म-प्रचार की प्रवृत्तियो का सचालन करेंगे। उनकी गृहस्थ-जीवन से लगभग पूर्ण निवृत्ति होगी। वे परिवार एव गृहस्थ के साथ रहते हुए भी पारिवारिक उत्तर-

दायित्वो से विरत-अनासक्त व्रती श्रावक के रूप मे साधना व सेवाकार्यों में सर्वभावेन रत रहेगे। भावना के स्तर पर वे गृहस्थ से दूर एव साधुत्व के समीप रहेगे। उनका जीवन स्वाध्याय, साधना और सेवा से ओत-प्रोत होगा। समाजसेवा एव धर्म प्रभावना के लिए वे आवश्यकतानुसार देश-विदेश का प्रवास भी करेंगे। वे श्रावक वर्ग की उच्चस्थ स्थिति के आदर्श-स्वरूप होंगे।

◆ ◆ ◆

परिशिष्ट—२

श्रीमद् जवाहराचार्य विरचित साहित्य

(श्री जवाहर साहित्य समिति, भीनासर द्वारा प्रकाशित)

जवाहर किरणावली :

प्रथम किरण	— दिव्यदान	३ ७५ पै०
द्वितीय ,,	— दिव्य जीवन	४ ०० ,,
तृतीय ,,	— दिव्य संदेश	२ ०० ,,
चतुर्थ ,,	— जीवन धर्म	४ ७५ ,,
पांचवी ,,	— सुबाहुकुमार	२ ५० ,,
सातवी ,,	— जवाहर स्मारक, प्रथम पुष्प	३ ०० ,,
आठवी ,,	— सम्यक्त्व पराक्रम, प्रथम भाग	२ ५० ,,
नवी ,,	— ,, ,, द्वितीय भाग	२ ५० ,,
दसवी ,,	— ,, ,, तृतीय भाग	२.५० ,,
ग्यारहवी ,,	— ,, ,, चतुर्थ भाग	३.७५ ,,
बारहवी ,,	— ,, ,, पंचम भाग	
सतरहवी ,,	— पाण्डव-चरित्र, प्रथम भाग	१ ७५ ,,
अठारहवी ,,	— ,, ,, द्वितीय भाग	१ ७५ ,,
उन्नीसवी ,,	— बीकानेर के व्याख्यान	२.७५ ,,
इक्कीसवी ,,	— मोरवी के व्याख्यान	२.०० ,,
बाईसवी ,,	— सम्वत्सरी	२ ०० ,,
तेईसवी ,,	— जामनगर के व्याख्यान	२ ०० ,,

चौवीसवी किरण — प्रार्थना प्रबोध		३ ७५ पैं०
पच्चीसवी ,, — उदाहरणमाला, प्रथम भाग		२ ०० ,,
छव्वीसवी ,, — उदाहरणमाला, द्वितीय भाग		३ २५ ,,
सत्ताईसवी ,, — ,, ,, तृतीय भाग		२.२५ ,,
अट्ठाईसवी ,, — नारी जीवन		२ २५ ,,
उनतीसवी ,, — अनाथ भगवान्, प्रथम भाग		२.०० ,,
तीसवी ,, — ,, ,, द्वितीय भाग		१ ५० ,,
सद्धर्म-मण्डन		११ ०० ,,

(श्री सम्यक्ज्ञान मंदिर, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित)

इकतीसवी किरण — गृहस्थ धर्म, प्रथम भाग	१ ६२ पैं०
बत्तीसवी किरण — ,, ,, द्वितीय भाग	१ ७५ ,,
तेतीसवी किरण — ,, ,, तृतीय भाग	१ ५० ,,

(श्री जैन जवाहर मित्र मंडल, ब्यावर द्वारा प्रकाशित)

तेरहवी किरण — धर्म और धर्म नायक	२ ६० पैं०
चौदहवी ,, — राम वनगमन, प्रथम भाग	३ ०० ,,
पन्द्रहवी ,, — ,, ,, द्वितीय भाग	३ ०० ,,
चौतीसवी ,, — सती राजमती	२ ०० ,,
पैंतीसवीं ,, — सती मदनरेखा	२ ७५ ,,

(श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन सघ द्वारा प्रकाशित)

छठी किरण — रुक्मिणी विवाह	२ २५ पैं०
सोलहवी किरण — अजना	१ २५ ,,

बीसवी किरण — शालिभद्र चरित्र	२ २५ पैं०
हरिश्चन्द्र तारा	२.०० "
जवाहर ज्योति	३.०० "
चिन्तन-मनन-अनुशीलन, प्रथम भाग	१.०० "
" " " द्वितीय भाग	१.०० "

(श्री श्वे. साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था, बीकानेर द्वारा प्रकाशित)

जवाहर–विचार सार	२ ५० पैं०

(श्री जैन हितेच्छु श्रावक मडल, रतलाम द्वारा प्रकाशित)

सेट—१

श्री भगवती सूत्र पर व्याख्यान, भाग ३ " " " " ४ " " " " ५ " " " " ६	४.०० पैं०

सेट—२

अनुकम्पा–विचार, भाग १ " " " २	२.०० पैं०

सेट—३

राजकोट के व्याख्यान, भाग १ " " " " २ " " " " ३	२.५० पैं०

सेट—४

सम्यक्त्व-स्वरूप श्रावक के चार शिक्षाव्रत श्रावक के तीन गुणव्रत श्रावक का अस्तेयव्रत श्रावक का सत्यव्रत परिग्रह परिमाणव्रत	१.५० पै०

सेट—५

तीर्थङ्कर चरित्र, प्रथम भाग तीर्थङ्कर चरित्र, द्वितीय भाग सकडाल पुत्र सनाथ-अनाथ निर्णय श्वेताम्बर तेरह पथ	२ ५० पै ०

नोट .—पूरे सेट लेने पर ११.०० मे प्राप्त होगे।

धर्म व्याख्या	१ २५ पै०
सुदर्शन-चरित्र	२ २५ ,,
श्री सेठ धन्ना चरित्र	१ ५० ,,

परिशिष्ट—३

हमारे अन्य महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

श्री गणेश स्मृति ग्रन्थमाला, बीकानेर

(परम पूज्य स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा. के व्याख्यान)

जैन सस्कृति का राजमार्ग	२ ५० पैसे
आत्म-दर्शन	१.५० "
नवीनता के अनुगामी (सम्यक्ज्ञान मन्दिर; कलकत्ता का प्रकाशन)	१.२५ "
पूज्य गणेशाचार्य जीवन-चरित्र (अर्द्ध मूल्य)	५.०० "

(परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानालाल जी म. सा. के प्रवचन)

पावस-प्रवचन, प्रथम भाग (जयपुर)	२.५० पैसे
" " द्वितीय भाग "	२.५० "
" " तृतीय भाग "	३.५० "
" " चतुर्थ भाग "	५.०० "
" " पाचवा भाग "	५.५० "
ताप और तप (मन्दसौर)	२.५० "
शाति के सोपान (ब्यावर)	३.२५ "
समता-दर्शन और व्यवहार	४.०० "

आध्यात्मिक वैभव (बीकानेर)	१ ५० पैसे
आध्यात्मिक आलोक (बीकानेर)	१ ५० ,,

विविध :

समता जीवन	०.५० ,,
समता-दर्शन, एक दिग्दर्शन	० ५० ,,
सौन्दर्य दर्शन (कथा-सग्रह पाकेट बुक साइज)	२ ०० ,,
श्रीमद् जवाहराचार्य, जीवन और व्यक्तित्व (पाकेट बुक साइज)	२.०० ,,
श्रीमद् जवाहराचार्य समाज	२ ०० ,,

(परिनिर्वाण-वर्ष के उपलक्ष्य मे संघ के विशेष प्रकाशन)

भगवान् महावीर आधुनिक सदर्भ मे (सम्पादक—डॉ० नरेन्द्र भानावत)	४०.००
Lord Mahavir & His Times (Dr. K C Jain)	६०.००
Bhagwan Mahavir & His Relevence in Modern Times (Dr. N. Bhanawat & Dr. P S. Jain)	२५ ००

सघ का मुखपत्र . श्रमणोपासक

वार्षिक शुल्क	१०.००
आजीवन सदस्यता	१५१.००

परिशिष्ट—४

श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तकमाला

प्रकाशन-योजना

१ श्रीमद् जवाहराचार्य जीवन और व्यक्तित्व
■ डॉ० नरेन्द्र भानावत, महावीर कोटिया

२ श्रीमद् जवाहराचार्य : धर्म
■ कन्हैयालाल लोढा

३ श्रीमद् जवाहराचार्य : समाज
■ ओंकार पारीक

४ श्रीमद् जवाहराचार्य राष्ट्रीयता
■ डॉ० इन्दरराज बैद

५ श्रीमद् जवाहराचार्य शिक्षा
■ महावीर कोटिया

६ श्रीमद् जवाहराचार्य नारी
■ डॉ० शान्ता भानावत

७ श्रीमद् जवाहराचार्य · साहित्य
■ डॉ० नरेन्द्र भानावत

८ श्रीमद् जवाहराचार्य · सूक्तिया
■ डॉ० नरेन्द्र भानावत, कन्हैयालाल लोढा